प्रेमोपहार

....

....

प्रकाशक का निवेदन

'मीरा और उन की प्रेमवाणी' को हम जिस रूप में निकालना चाहते थे, युद्ध जनित कठिनाइयों के कारण हम उस रूप में इसे नहीं निकाल सके। पुस्तक में जो त्रुटियाँ रह गयी हैं उनका सुधार अगले संस्करण में होगा। आशा है, सहृदय पाठक विषम परिस्थितियों को ध्यान में रख हमारी असमर्थता के लिये क्षमा करेंगे।

अयोध्या सिंह

मीरांबाईकी जीवनी
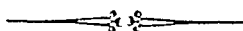
प्रेमकी अनन्य पुजारिन

मीरांबाईने अपनी अनन्य प्रेमोपासनाके बलपर भारतीय साधना तथा हिन्दी-साहित्यके इतिहासमें अप्रतिम स्थान प्राप्त कर लिया है। एक समृद्ध राजपरिवारमें उनका जन्म हुआ था ('राठाड़ांकी धीयड़ीजी') तथा राजपूतानेके सबसे प्रसिद्ध राजकुलमें उनका विवाह हुआ था ('सीसोद्यांके साथ'), फिर भी उन्होंने समस्त राजवैभव त्यागकर वैराग्य धारण किया और घोषित किया—

मेरे तो गिरधर गुपाल दूसरो न कोई।
जाके सिर मोर-मुकुट मेरो पति सोई। (पद ५)

उन्होंने माणिक-मोती पहननेसे इनकार कर दिया, सब शृंगार तज दिया, और छापा-तिलक बनाकर गलेमें दोहरी माला तथा कुटकी डाल ली।[१] वे नित्यप्रति हरिजीके मन्दिरमें चुटकी

---

१. माणिक मोती परत न पहिरूं, मैं कब की नटकी।
गेणो तो म्हांरो माला दोवड़ी, और चन्दनकी कुटकी। (पद १६०)
छापा तिलक बनाइया तजिया सब सिंगार। (पद १५३)

दे-देकर नाचा करती थी।१ इस प्रकार हरि-कीर्तनमें रमे हुए उनके मुखसे जो स्वाभाविक हृदयोद्गार निकलते थे, वे ही पद भक्तोंके कंठ-कंठसे प्रचारित होते हुए आज हिन्दी-साहित्यकी अमूल्य निधि वन गये हैं।

जन्म

मीरांवाई जोधपुर रियासतके संस्थापक राव जोधाजी (सन् १४१५ —१४८८ ई०) के पुत्र राव दूदाजी (सन् १४४०— १५१५ ई०) की पौत्री तथा रत्नसिंह (मृ० सन् १५२७ ई०) की इकलौती पुत्री थीं। राव दूदाजीने अपने पिताके जन्मकालमें ही अजमेर के सूवेदारसे मेड़ता प्रान्त छीन लिया था, और वहां मेड़ता नगर (१४६८ ई०) वसाया था। वादमें वह प्रान्त उन्हें अपने पितासे जागीर-स्वरूप मिल गया, और तव उन्होंने मेड़ता (जोधपुरके ३५ मील उत्तर-पूर्व) में अपनी राजधानी वनाई। इसीलिये उनके वंशज मेड़तिया* राठौड़ कहलाये। रत्नसिंह राव दूदाजीके चतुर्थ पुत्र थे। उन्हें अपने पितासे १२ गांव जीवन-निर्वाहके लिये जागीर-स्वरूप मिले हुए थे, जिनमें एक कुड़की या चोकड़ी गांवमें अनुमानतः सन् १५०३ ई० के आस-पास मीरांवाईका जन्म हुआ था।※

---

१. नित उठ हरिजीके मन्दिर जास्यां, नाच्यां दे-दे चुटकी। (पद १६०)

* मीरांवाई भी अपने श्वसुर-कुलमें मेड़तणीजीके नामसे प्रसिद्ध थीं।

※ मीरांवाईकी निश्चित जन्मतिथि ज्ञात नहीं है, अतः विविध लेखकोंने

माताका देहान्त

मीरांबाईकी माताका देहान्त बचपनमें ही हो गया था, अतः उनका लालन-पालन मेड़तेमें ही पितामह राव दूदाजीकी गोदमें हुआ। राव दूदाजी परम वैष्णव तथा चतुर्भुजके अनन्य भक्त थे, अतः उनके पास रहनेसे मीरांके हृदयमें भी बचपनसे ही भगवद्भक्ति उत्पन्न हो गई।

विविध अनुमान लगाये हैं। राव जयमल (रत्नसिंहके बड़े भाई वीरमजीके पुत्र) मीरांके चचेरे भाई थे। दोनोंका पालन-पोषण पितामह राव दूदाजीकी गोदमें हुआ था। जयमलका जन्म सन् १५०० ई० में हुआ था। मीरां उनसे कुछ ही छोटी रही होंगी। इसी आधारपर मीरांका जन्म सन् १५०३ ई० के आसपास होनेका अनुमान लगाया गया है।

कुछ लेखकोंने मीरांका जन्म सं० १५५६ के आसपास माना है। इसे माननेमें एक कठिनाई है। मीरांका विवाह राणा सांगा (जन्म सं० १५२९ =सन १४८२ ई०) के पुत्र भोजराजसे हुआ था। यदि मीरांका जन्म सं० १५५६ के आसपास मानते हैं, तो भोजराजका जन्म, उन्हें मीरांसे २-३ वर्ष बड़ा मानकर, सं० १५५३ (सन् १४९६ ई०) के आसपास मानना पड़ता है। इसका अर्थ यह हुआ कि भोजराजके जन्मके समय राणा सांगा की आयु केवल १३-१४ वर्ष थी, जो ठीक नहीं जान पड़ता।

मेकालिफने मीरांका जन्म सन् १५०४ ई० (सं० १५६१) के आसपास माना है। (दी लीजेंड्स आव मीराबाई, इण्डियन एन्टीक्वारी, १९०३ ई०)

'वालपनेकी प्रीत'

श्री गिरधरलालमें मीरांकी लगन लगनेके सम्बन्धमें कुछ किंवदन्तियां प्रचलित हैं, जो वड़ी ही रोचक हैं। कहते हैं, जब मीरांवाई वालिका थीं, उनके पिताके घर एक साधु आकर ठहरा। उसके पास श्री गिरधरलालकी एक वड़ी सुन्दर मूर्त्ति थी। मीरांवाई उस सुन्दर मूर्त्तिको लेनेके लिये मचलने लगीं। साधुने मूर्त्ति नहीं दी और चला गया। मीरांने हठपूर्वक अपना खाना-पीना छोड़ दिया। उधर साधुको स्वप्न हुआ कि 'मूर्त्ति' मीरांके हाथ सौंप दो। अतः विवश होकर साधु वापस लौटा, और उसने मूर्त्ति मीरांको दे दी। मीरांवाई मूर्त्ति पाकर वड़ी प्रसन्न हुईं। वह उसे सदा अपने पास रखने लगीं। जहां अन्य वालिकायें अपनी गुड़ियोंका त्योहार मनातीं, मीरां अपने गिरिधरलालका उत्सव मनाया करती थीं।

एक दूसरी किंवदन्ती है कि मीरां जव पांच-छः वर्षकी थीं, उनके गांवमें एक वारात आई। वर देखकर उन्होंने कुतूहलवश अपनी मातासे पूछा कि मेरा वर कहां है। माताने वालिकाकी वात टालनेके भावसे हँसकर कहा कि मन्दिरमें श्री गिरधरगोपालकी जो मूर्त्ति है, वही तेरे पति हैं। उस दिनसे मीरांवाई गिरधरगोपालको अपना पति मानकर उनकी सेवा करने लगीं।

मीरांवाईने अपने पदोंमें 'वालसनेही' और 'वालपनेकी प्रीत' का उल्लेख किया है, जिससे संकेत होता है कि वाल्यावस्थामें ही उन्हें श्री गिरधरलालका इष्ट हो गया था।

विवाह तथा वैधव्य

सन् १५१५ ई० में मीरांके पितामह राव दूदाजीका देहान्त हो गया, और वीरमदेव (रत्नसिंहके बड़े भाई) उनके उत्तराधिकारी हुए। उन्होंने सन् १५१६ ई० के आसपास (अनुमानतः) मीरांका विवाह राणा सांगा (जन्म १४८२ ई०) के पुत्र भोजराज से कर दिया।* पर मीरांबाईका वैवाहिक जीवनका सुख क्षणिक रहा। विवाहसे कुछ ही साल बाद (अनुमानतः सन् १५२३ ई०

---

* कर्नल टाडने सबसे पहले यह भ्रांति फैलाई कि मीरांका विवाह राणा कुम्भ (मृ० सन १४६७ ई०) से हुआ था, जिससे उनका समय एक शताब्दी पहले चला जाता है। महाराणा कुम्भके बनवाये हुए कुम्भ स्वामी के मन्दिरके पास ही एक छोटा मन्दिर देखकर, जो जनश्रुतियोंके अनुसार मीरांबाईका बनवाया हुआ कहा जाता था, कर्नल टाडने इस बातपर विश्वास कर लिया कि मीरांबाई राणा कुम्भकी रानी थीं। वस्तुत; यह दूसरा आदि वाराहका मन्दिर भी राणा कुम्भने ही सं० १५०७ (सन् १४६० ई०) में बनवाया था। राणा कुम्भ सन् १४६७ ई० में मारे गये, और उसके एक साल बाद मीरांके पितामह राव दूदाजीने मेड़ता अपनी राजधानी बनाई। कुम्भके मारे जानेके ५९ साल बाद मीरांके पिता रत्नसिंह कनवाहके युद्धमें मारे गये। इसलिये राणा कुम्भसे मीरांबाईका विवाह असम्भव है।

श्री हरिविलास सारदाने अपनी पुस्तक 'महाराणा सांगा' तथा श्री गौरीशंकर हीराचन्द ओझाने अपने 'राजपूतोंका इतिहास' में सिद्ध किया है कि मीरांका विवाह महाराणा सांगाके पुत्र भोजराजसे हुआ था।

के आसपास) उनके पतिका देहान्त हो गया। इसके वाद ही उनपर दूसरा वज्रपात हुआ। १५२७ ई० में कनवाहके रणक्षेत्रमें वावरसे युद्ध करते हुए उनके पिता रत्नसिंहने वीरगति पाई। इसके कुछ ही समयके वाद उनके श्वसुर महाराणा सांगाका भी देहान्त हो गया। इस प्रकार मीरांवाई आश्रयविहीन हो गईं और स्वभावतया उनकी चित्तवृत्ति वैराग्यकी ओर उन्मुख हुई। श्री गिरधरलालका इष्ट उन्हें वचपनसे ही था। कहते हैं कि जव वह विवाहके वाद ससुराल गई थीं, तो श्री गिरधरलालकी मूर्त्ति भी अपने साथ लेती गई थीं, और पतिके जीवनकालमें ही उसकी पूजा-अर्चना किया करती थीं।* पहले पति, फिर पिता और अन्तमें श्वसुरकी मृत्यु हो जानेपर उनके हृदयमें संसारसे पूर्ण विरक्ति हो गई, और वह अपना सारा समय भगवद्भजन तथा साधु-सत्संगमें विताने लगीं।

---

* प्रियादासने लिखा है कि श्वसुरके घर देवी-पूजनपर मीरांवाई और उनकी सासमें कहा-सुनी हो गई थी। जव उनकी सास उन्हें देवी-पूजनके लिये ले जानेको उद्यत हुईं, तो उन्होंने कहा कि यह माथा गिरधरलालके चरणोंपर झुक चुका है, और किसीके चरणोंपर नहीं नवेगा। इसपर उनकी सास खिसिया गईं, और उन्होंने उनके पतिसे जाकर शिकायत की। राणाने कोपकर उन्हें एकान्तवासका दंड दिया। (भक्तमाल सटीक, पृष्ठ ६९७)

मीरांके नाम प्रचलित एक पदमें भी इसका उल्लेख है—

सास—ओरज पूजै गोरज्या जी, थे क्यूं पूजो न गोर।

हरि-कीर्त्तन

साधु-संतोंका सत्कार करनेमें मीरांने लोकलज्जा त्याग दी। वे प्रेमावेशमें पैरोंमें घुघरू बांधकर तथा हाथोंमें करताल लेकर अपने प्रभुके आगे नाचा करती थीं। उनके देवर महाराणा रत्नसिंह (महाराणा सांगाके उत्तराधिकारी) ने तथा परिवारके अन्य लोगोंने उन्हें बहुत समझाया कि ये बातें राजवंशकी मर्यादा के विरुद्ध हैं। पर उन्होंने घोषित कर दिया :—

राणाजी म्हें तो गोविंद का गुण गास्यां।
चरणामृत को नेम हमारो, नित उठ दर्शन जास्यां।
हरि मन्दिरमें निरत करास्यां, घूंघरियां घमकास्यां।
रामनाम का झाझ चलास्यां, भवसागर तर जास्यां।
यह संसार बाड़का कांटा, ज्यां संगत नहीं जास्यां।
मीरा कहे प्रभु गिरिधर नागर, निरख परख गुण गास्यां।*

इस प्रकार घरके लोगोंके कहने-सुननेका उनपर कोई प्रभाव

मन बछंत फल पावस्यो जी, थे क्यूं पूजो ओर।
मीरां—नहिं हम पूजां गोरज्या जी, नहिं पूजां अनदेव।
परम सनेही गोविंदो, थे काईं जानो म्हांरो भेव।

पर ये सब दंतकथायें नितान्त कल्पित मालूम पड़ती हैं। सम्भवतः श्री गिरधरलालके प्रति मीरांबाईके अनन्य प्रेमको दिखानेके लिये ही भक्तोंने ऐसी कथायें गढ़ लीं।

* पद १६८।

नहीं पड़ा, और उनकी हरिभक्ति दिन-पर-दिन बढ़ती गई। धीरे-धीरे उनकी ख्याति दूर-दूर तक फैल गई, और बहुतसे लोग उनके दर्शनों तथा सत्संगके लिये आने लगे।

क्या रैदास गुरु थे ?

कहते हैं, मीरांबाईके दीक्षागुरु महात्मा रैदास थे।* मीरांबाई के नामपर प्रचलित तीन-चार पदोंमें रैदासका नाम आया है :—

गुरु मिलिया रैदासजी, दीन्हीं ज्ञानकी गुटकी।

(पद १६०)

रैदास संत मिले मोहिं सतगुरु, दीन्हा सुरत सहदानी।

(पद १३२)

गुरु रैदास मिले मोहिं पूरे, धुरसे कमल भिड़ी।

(पद ६८)

मीराने गोविंद मिल्या जी, गुरु मिलिया रैदास।

(पद १४८)

पर मीरांबाईका रैदासकी शिष्या होना सम्भव नहीं जान पड़ता। रैदास रामानन्दी सम्प्रदायके थे, मीरां कृष्ण-भक्त थीं। रैदासका समय निश्चित नहीं है; पर वे कबीरदास (१४ वीं शताब्दी) के समकालीन माने जाते हैं। अतः उनका आविर्भाव मीरांबाईसे एक शताब्दी पहले हुआ था। प्रियादासने लिखा है

---

* ऐन आउटलाइन आव रिलीजस लिटरेचर आव इण्डिया, जे० एन० फरक्वहर, पृष्ठ ३०६।

कि रैदास रानी झाली (राणा सांगाकी मां) के गुरु थ । मीरांबाई का उस समय जन्म भी नहीं हुआ था। अतः हमें यही मानना पड़ता है कि या तो उक्त पद प्रक्षिप्त हैं, या एक समय मीरांवाई पर संत रैदासकी वानीका वहुत प्रभाव पड़ा था, और इसीलिये उन्होंने रैदासको अपना गुरु मान लिया।

मीरांबाई और पुष्टिमार्ग

कुछ लोगोंकी धारणा है कि मीरांबाई (सन् १४७६-१५३० ई०) पुष्टिमार्गमें दीक्षित हुई थीं। पर यह धारणा भी भ्रमपूर्ण है। सम्भवतः मेवाड़में वल्लभ सम्प्रदायको बादमें जो लोकप्रियता मिली, उसीके कारण मीरांबाईका भी उक्त सम्प्रदायसे सम्बन्ध जोड़ लिया गया। पर 'चौरासी वैष्णवनकी वार्त्ता' के ही अनुसार मीरांवाई वल्लभ सम्प्रदायसे उदासीन थीं। 'वार्त्ता' के रचयिताका कहना है कि मीरांवाईके पुरोहित रामदास वल्लभाचार्यके सेवक थे :

> 'सो एक दिन मीरांबाईके श्री ठाकुरजीके आगें रामदासजी कीर्तन करत हुते। सो रामदासजी श्री आचार्यजी महाप्रभूनके पद गावत हुते। तब मीरांबाई वोली जो दूसरो पद श्री ठाकुरजीकोगावों। तब रामदासजीने कह्यो मीरांवाई सो जो अरी यह कोन को पद है। जा आज ते तेरे मुहड़ो कवहूं न देखूंगो। मीरांबाई ने बहुत बुलाये परि वे रामदासजी आये नहीं। तब घर बैठे भेंट पठाई सोई फेरि दीनी और कह्यो जो रांड़ तेरो

श्री आचार्यजी महाप्रभून ऊपर समत्व नहीं जो हमको तेरी वृत्ति कहा करनी है।'१

एक दूसरी 'वार्त्ता' में बताया गया है कि एक बार वल्लभाचार्य के 'निज सेवक' गोविंद दुबे मीरांबाईके घर उतर गये, तो वल्लभाचार्यको बुरा लगा, और उन्होंने उन्हें बुलवा भेजा :

'और एक समय गोविंद दुबे मीरांबाईके घर हुते तहां मीरांबाई सों भगवद्वार्त्ता करत अटके। तब श्री आचार्यजी ने सुनी जो गोविंद दुबे मीरांबाईके घर उतरे हैं सो अटके हैं। तब श्री गुसाईंजी ने एक श्लोक लिख पठायो सो एक व्रजवासीके हाथ पठायो। तब वह व्रजवासी चल्यौ सो वहां जाय पहुंचौ। ता समय गोविंन दुबे संध्या-वन्दन करत हुते। तब व्रजवासीने आयके वह पत्र दीनों। सो पत्र वांचिके गोविंद दुबे तत्काल उठे। तब मीरांबाईने बहुत समाधान कियो, परि गोविंद दुबेने फिर पाछे न देख्यो।'२

इसी प्रकार कृष्णदास अधिकारी (वल्लभाचार्यके सेवक) ने मीरांबाईकी श्रीनाथजीके लिये भेंट की हुई मुहरें यह कहकर लौटा दी कि 'जो तू श्री आचार्यजी महाप्रभूनकी सेवक नाहीं होत ताते तेरी भेंट हम हाथ ते छूवेंगे नहीं।'३

१, चौरासी वैष्णवनकी वार्त्ता, पृष्ठ २०७-२०८। २, वही, पृष्ठ १६२। ३, वही, पेज ३४२-३४३।

दो सौ बावन वैष्णवनकी वार्त्ता

इन वार्त्ताओंसे स्पष्ट है कि मीरांबाई वल्लभाचार्यकी शिष्या नहीं बनी थीं। 'दो सौ बावन वैष्णवनकी वार्त्ता'में मीरांबाईके नाम का उल्लेख न करके राजा जयमलकी बहिनके रूपमें उनका उल्लेख किया गया है। वार्त्तामें कहा गया है कि श्री गोसाईं विट्ठलनाथ के शिष्य हरिदासने मीरांबाईको पुष्टिमार्गमें दीक्षित किया :

'सो वे हरिदास बनिया मेरता गाममें रहते। वा गाममें एक ही वैष्णव हते। और वा गामको राजा जैमल हतो। सो स्मार्त-धर्ममें हतो। एकादशी पहेली करते हते। और जैमल राजाकी बेनको घर हरिदास बनियाके सामें हुतो। सो जब श्री गुसाईंजी हरिदासके घर पधारे हुते तब जैमलकी बेन कुं बारीमें सू श्री गुसाईंजीके साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तमके दर्शन भये। जब जैमलकी बेनने पत्र द्वारा श्री गोसाईंजीको बिनती लिखके पत्र द्वारा सेवक भई। काहे तें वे पड़दामें से बाहर नहीं निकसते जासूं पत्र द्वारा सेवक भये। इतनेमें श्री गुसाईंजी द्वारका सों मेरते पधारे और सब कुटुंब सहित गाम सहित जैमलजी वैष्णव भये।'*

पर 'दो सौ बावन वैष्णवनकी वार्त्ता' कोई प्रामाणिक पुस्तक नहीं है, अतः इस वार्त्ताकी प्रामाणिकतामें भी संदेह है। जहां तक

---

* दो सौ वैष्णवनकी वार्त्ता, पेज ६४-६९।

ज्ञात हुआ है, मीरांवाई वैष्णव अवश्य थीं, पर उन्होंने किसी सम्प्रदाय-विशेपमें दीक्षा नहीं ली थी।

स्वजनों के अत्याचार

राणा रत्नसिंह सन् १५३१ ई० में मारे गये और उनके सौतेले भाई विक्रमादित्य राणा हुये। विक्रमादित्य वहुत ही अयोग्य शासक थे। उन्हें मीरांवाईका संत-समागम तथा हरिनाम-कीर्तन अच्छा न लगता था, और उन्होंने उनपर अनेक अत्याचार किये। मीरांवाई के अनेक पदोंमें जो राणा सम्वोधन है, वह सम्भवतः इन्हींके लिये है।

ऊदावाईका प्रवोधन

कहते हैं, राणाने पहले मीरांवाईकी ननद ऊदावाईको समझाने के लिये भेजा।

ऊदावाई—थांने वरज-वरज मैं हारी, भाभी मानो वात हमारी।

राणे रोस कियो थां ऊपर, साधोंमें मत जा री।
साधों रे संग वन-वन भटको, लाज गुमाई सारी।
वड़ा घरा थें जनम लियो छै, नाचो दे-दे तारी।
वर पायो हिंदवाणे सूरज, थें काईं मन धारी।
मीरा गिरधर-साध संग तज, चलो हमारी लारी।

मीरांवाई—मीरां वात नहीं जग छानी, ऊदा समझो सुघर सयानी।

साधू मात पिता कुल मेरे, सजन सनेही ग्यानी।
संत चरणकी सरण रैन-दिन, सत्त कहत हूं वानी।

राणाने समझावो जावो, मैं तो बात न मानी।
मीरांके प्रभु गिरधर नागर, संतां हाथ विकानी।

ऊदाबाई—भाभी बोलो वचन विचारी।
साधो की संगत दुख भारी, मानो बात हमारी।
छापा तिलक गलहार उतारो, पहिरो हार हजारी।
रतन जड़ित पहिरो आभूषण, भोगो भोग अपारी।
मीरांजी थें चलो महलमें, थांने सोगन म्हारी।

मीरांबाई—भाव भगत भूषण सजे, सील संतां सिंगार।
ओढ़ी चूनर प्रेमकी, गिरधरजी भरतार।
ऊदाबाई मन समझ, जावो अपने धाम।
राजपाट भोगो तुम्हीं, हमें न तासूं काम।१

विषका प्याला

राणाने कुपित होकर विष भरा प्याला भेजा, पर मीरां उसे चरणामृत मानकर पी गई :

विषकों प्याला राणाजी मेल्यो, द्यो मेड़तणीने पाय।
कर चरणामृत पी गई रे, गुण गोविंद रा गाय।२

राणाने पिटारेमें सांप भरकर भेजा, पर मीरांने जब उसे गले में डाला, तो हार बन गया :

सांप पिटारो राणाजी भेज्यां, द्यो मेड़तणी गल डार।
हँस-हँस मीरां कंठ लगायो, यो तो म्हांरे नौसर हार।३

एक अन्य पदमें संकेत है कि मीरांने जब सांपका पिटारा छुआ, तो उसमें शालिग्राम निकले :

सांप पिटारा राणा भेज्यो, मीरां हाथ दियो जाय।
न्हाय-धोय जब देखण लागी, सालिगराम गई पाय ।४

राणा तलवार लेकर मारने दौड़े, पर मीरां अविचलित रहीं :

जब मैं चली साधको दरसण, तब राणो मारण कूं दौरयो ।५

(पद १५८)

१, पद १५० । २, पद १५२ । ३, वही । ४ पद १७० ।

५. प्रियादासने भक्तमालकी टीकामें लिखा है कि राणाने मीरांके चारो ओर अपने चर लगा दिये । एक बार मीरां जब मंदिरके पट बन्दकर अपने गिरधारीलालसे हंस-बोल रही थीं, उन्होंने जाकर राणाको सूचना दी । राणा तलवार लेकर दौड़ पड़े । बोले—

जाके संग रंग भीजि करन प्रसंग नाना ;
कहां वह नर गयौ, वेगि दै बताइयै ।

मीरांने गिरधारीलालकी मूर्त्तिकी ओर संकेतकर कहा—

आगे ही विराजे, कछू तो सों नहीं लाजै ;
अभूं देख सुख साजे, आंखै खोलि दरसाइयै ।

इसपर राणा खिसिया गये और उलटे पैर लौट गये ।

इसी प्रकार उन्होंने एक कुटिल साधुके मीरांसे नीच प्रस्ताव करनेकी भी कथा दी है—

विषई कुटिल एक भेष धरि साधु लियौ ;
कियौ यों प्रसंग मो सों अंग संग कीजिये ।
आज्ञा मों को दई आप लाल गिरधारी अहो ;

राणाने मीरांके लिये सूलीकी सेज भेजी, पर वह उसपर ऐसे सो गईं, जैसे फूलोंकी सेज हो :

सूल सेज राणाने भेजी, दीज्यो मीरा सुलाय।
सांझ भई मीरा सोवण लागी, मानो फूल बिछाय।[१]

इन किंवदंतियोंमें कहां तक सचाई है, कहा नहीं जा सकता। हां, इनसे इतना अवश्य सिद्ध होता है कि श्री गिरधरके चरणोंमें मीरांकी अनन्य भक्ति थी, और अनेक विपत्तियां सहनेपर भी वे अपने पथपर डटी रहीं।

श्री देवीप्रसाद मुंसिफ मीरांको जहर दिये जानेकी घटना सत्य मानते थे। उन्होंने लिखा है—'मीराबाईको राणा विक्रमाजीतके दीवान कौम महाजन बीजावर्गीने जहर दिया था।···मीरांबाईका श्राप वीजावर्गी कौमको अब तक लगा हुआ है और वे मानते हैं कि उस श्रापसे हमारी औलाद और दौलतमें तरक्की नहीं होती है।'[२]

सीस धरि लई करि भोजन हूं लीजिये।
सन्तनि समाज में बिछाय सेज बोलि लियौ ;
संक अब कौन को निसंक रस भीजियै।
सेत मुख भयो, विषै भाव सब गयौ ;
नयौ पांयन पै आय मों को भक्तिदान दीजियै।

१. पद १७०।

२. बाबू शिवनन्दन सहाय द्वारा 'श्री गोस्वामी तुलसीदास'में पेज ११३-१४ पर उद्धृत।

पर इन घटनाओंकी पुष्टिमें हम मीरांके नामपर प्रचलित पदों तथा भक्तोंके उल्लेखोंके अलावा कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं उपस्थित कर सकते।

क्या तुलसीदाससे पत्र-व्यवहार हुआ था ?

कहते हैं, मीरांबाईने स्वजनोंके उत्पातोंसे दुखी होकर तथा साधु-समागम और ईश्वर-भजनमें बाधा पड़ते देखकर गोस्वामी तुलसीदासको पत्र लिखा और उनसे परामर्श मांगा।

मीरांबाईका वह पत्र निम्न प्रकार बताया जाता है :—

श्री तुलसी सुख निधान, दुख हरन गोसाईं।
बारहि बार प्रणाम करूं, अब हरो सोक समुदाई॥
घरके स्वजन हमारे जेते, सबन उपाधि बढ़ाई।
साधु संग अरु भजन करत, मोहिं देत कलेस महाई॥
बालपने तें मीरा कीन्हीं, गिरधरलाल मिताई।
सो तो अब छूटत नहीं क्यों हूं, लगी लगन बरियाई॥
मेरे मात पिताके सम हो, हरि भक्तन सुखदाई।
हमको कहा उचित करिबो है, सो लिखियो समुझाई॥

कहते हैं, इसके उत्तरमें गोस्वामी तुलसीदासने निम्न पद और सवैया लिख भेजा :—

जाके प्रिय न राम वैदेही।
तजिये ताहि कोटि वैरी सम, यद्यपि परम सनेही॥
तज्यो पिता प्रह्लाद, बिभीषन बंधु, भरत महतारी।

बलि गुरु तज्यो, कंत ब्रजवनिता, भये सब मंगलकारी ।।
नातो नेह राम सों मनियत, सुहृदय सुसेव्य जहां लौं ।
अंजन कहा आंख जो फूटै, बहुत कहौं कहां लौं ।।
तुलसी सो सब भांति परम हित, पूज्य प्रान ते प्यारो ।
जासों बढ़े सनेह रामपद, एतो मतो हमारो ।।

सो जननी सो पिता सोई भ्रात, सो भामिन सो सुत सो हित मेरो ।
सोई सगो सो सखा सोइ सेवक, सो गुरु सो सुर साहिब चेरो ।।
सो तुलसी प्रिय प्रान समान, कहां लौं बनाई कहौं बहुतेरो ।
जो तजि गेहको देहको नेह, सनेह सो रामको होय सवेरो ।।

बाबा वेणीमाधवदासने अपने 'गोसाईं-चरित' में मीरांबाईके पत्रका उल्लेख करते हुए लिखा है :—

तब आयो मेवाड़ ते विप्र नाम सुखपाल ।
मीरांबाई पत्रिका लायो प्रेम प्रवाल ।।
पढ़ पाती उत्तर लिखे गीत कवित्त बनाय ।
सब तजि हरि भजियो भलो, कहि दिय विप्र पठाय ।।[१]

पर गोसाईं-चरितकी प्रामाणिकता संदिग्ध है । श्री तुलसीदासका समय समान्य रूपसे सन् १५३२ ई० से सन् १६२३ ई० तक माना जाता है ।[२] उन्होंने अपना रामचरित-मानस सन् १५७४ ई०में

---

१. गोसाईं-चरित, दोहा ३१, ३२. । २. इनसाइकलोपीडिया ब्रिटेनिका, जिल्द २२, पृष्ठ ५४१ ।

लिखना आरम्भ किया, जिसके बाद उनकी कीर्ति दूर-दूर तक फैली। राणा विक्रमादित्य, जिनके सम्बन्धमें कहा जाता है कि उन्होंने मीरांबाईको अनेक यातनायें दीं, सन् १५३६ ई०में मार डाले गये। अतः यदि मीरांबाईने तुलसीदासको कोई पत्र लिखा होगा, तो वह राणा विक्रमादित्यके राज्यकालमें ही लिखा होगा, जिन्होंने उनके हरि-भजनमें बाधा डाली। पर उस समय तुलसीदासकी अवस्था केवल ४ वर्षकी थी। यदि हम 'गोसाईं-चरित' पर विश्वासकर तुलसीदासकी जन्मतिथि सन् १४९७ ई० भी मान लें तो विक्रमादित्यके मारे जानेके समय तुलसीदासकी आयु ३१ वर्ष थी। उस समय तक वह एक अज्ञातनामा व्यक्ति थे—'गोसाईं चरित' के ही अनुसार उनकी पहली रचना गीतावली सन् १५७१ ई० में लिखी गई, अतः उन्हें मीरांबाईका पत्र लिखना नितांत असम्भव है।

मायकेमें

मीरांबाईके कष्टोंकी कथा सुनकर उनके पितृव्य, काका वीरमदेवने उन्हें मेड़ता बुला लिया।[१] मेड़तेमें मीरांबाई निर्विघ्न रूपसे

१, मीरांके एक पद (पद १५३) में संकेत है कि मीरांने स्वयं राणासे पीहर भेजनेका प्रस्ताव किया :—

विष रा प्याला राणाजी भेज्या, दीजो मेड़तणीके हाथ।
कर चरणामृत पी गई, म्हांरा सबल धणीका साथ।
विषको प्यालो पी गई, भजन करे उस ठौर।
थांरा मारी ना मरुं, म्हांरो राखणहारो और।

भजन-पूजनमें मग्न रहने लगीं। कहते हैं, राजमहलके जिस भाग में वे उस समय पूजा किया करती थीं, वह कदाचित् चतुर्भुज भगवानके मंदिरमें सम्मिलित है, और आज भी 'मीरांबाईकी भोजनशाला' के नामसे खंडहरके रूपमें वर्त्तमान है।

तीर्थाटन और जीव गोस्वामीसे भेंट

पर वे वहां भी अधिक समय तक शांतिसे नहीं बैठ सकीं। मेड़ता और जोधपुरके राज्योंमें अनबन चल रही थी। सन् १५३८ ई० में जोधपुरके राव मालदेवने मेड़ता वीरमदेवसे छीन लिया।

राणोजी मोपर कोप्यो रे, मारूं एक न सेल।
मार्‌यां पराछित लागसी, म्हांने दीजो पीहर मेल।

इसी पदमें आगे संकेत किया गया है कि मीराँ जब रथपर चढ़कर तथा ऊंटोंपर सामान लदवाकर चलने लगीं, तो राणाने सांड़िये भेजे और कहा—एक ही दौड़में जाओ। अरे, यह तो कुलका तारण करनेवाली स्त्री रूठकर राठौड़के घर चली।

पर मीराने :—

सांड्यो पाछो फेर्‌यो रे, परत न देस्यां पांव।
कर सूरापण नीसरी, म्हांरे कुण राणे कुण राव।
संसारी निन्दा करे, दुखियो सब संसार।
कुल सारो ही लाज सी, मीरां थें जो भया जो ख्वार
राती माती प्रेमकी, विष भगत को मोड़।
राम अमल माती रहे, धन मीरा राठोड़।

इससे मीरांको बड़ी ग्लानि हुई, और उन्होंने मेड़ता भी त्यागकर तीर्थ-यात्रा करनेकी ठानी। तीर्थ-पर्यटन करती हुई मीरां वृन्दावन पहुंचीं। वहां उनके मनमें चैतन्य सम्प्रदायी श्री जीव गोस्वामी का दर्शन करनेकी इच्छा हुई। जीव गोस्वामीने किसी स्त्रीका मुख न देखनेकी प्रतिज्ञा की थी। उन्होंने पहले मिलनेसे इनकार कर दिया और कहला भेजा कि मैं स्त्रियोंसे नहीं मिलता। इस पर मीरांने उत्तर भेजा—'मैं तो वृन्दावनमें सबको सखी-रूप जानती थी, पुरुष केवल श्री गिरधरलालजीको समझती थी। आज मालूम हुआ कि उनके और भी पट्टीदार हैं।' इस उत्तरसे गोस्वामीजी बड़े लज्जित हुए। उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा तोड़ दी, और प्रेमावेशमें नंगे पैर मीरांसे मिलनेके लिये दौड़े। मीरांबाई कुछ दिन वृन्दावनमें रहीं और इसके बाद द्वारिका चली गईं।

मेवाड़से निमन्त्रण

मीरांबाईके मेवाड़ त्यागनेके बाद वहां अनेक विपत्तियां आईं। पहले वणवीर और फिर उदयसिंह मेवाड़की गद्दीपर बैठे। कहते हैं, उन्होंने मेवाड़पर पड़नेवाली विपत्तियोंका कारण मीरांबाईका वहांसे रूठकर चला जाना माना। उन्होंने मीरांबाईको लौटानेके लिये अपने ब्राह्मण द्वारिका भेजे। ब्राह्मणोंने मीरांबाईसे कहा कि जब तक आप न चलेंगी, हम अन्न-जल ग्रहण न करेंगे। विवश होकर मीरांबाई उनके साथ चलनेको तैयार हो गईं। वे रणछोरजीसे आज्ञा लेनेके लिये मन्दिरमें गईं, और कहते हैं कि वहीं मूर्त्तिमें

समा गईं। कहते हैं, मीरांके अन्तिम दो पद निम्नप्रकार हैं, जिन्हें गाकर वह मूर्त्तिमें समा गईं—

(१)

हरि तुम हरो जनकी भीर।
द्रोपदीकी लाज राख्यो तुम चढ़ायो चीर।
भक्त कारन रूप नरहरि धस्यो आप सरीर।
हिरनकस्यप मारि लीन्हो धस्यो नाहिन धीर।
बूड़ते गजराज राख्यो कियो बाहर नीर।
दास मीरा लाल गिरधर दुख जहां तहं पीर। (पद १६)

(२)

साजन सुध ज्यों जाने त्यों लीजे हो।
तुम बिन मेरे और न कोई, कृपा रावरी कीजे हो।
दिवस न भूख रैन नहिं निद्रा, यों तन पल-पल छीजे हो।
मीरा कह प्रभु गिरधर नागर, मिलि बिछुरन नहिं कीजे हो।
(पद ८४)

अकबरका दर्शनोंके लिये जाना

मीरांबाईकी मृत्यु-तिथिके सम्बन्धमें विद्वानोंमें मतभेद है। मुंशी देवीप्रसादने उनकी मृत्यु-तिथि सन् १५४६ ई० मानी है।[१]

---

१. राठौड़ोंका एक भाट जिसका नाम भूदान है, गाँव लूणवे, परगने मारोठ इलाके मेवाड़में रहता है। उसकी जबानी सुना गया कि मीरांबाईका देहान्त संवत् १६०३ में हुआ था और कहां हुआ, यह मालूम नहीं। मीरांबाईका जीवन-चरित, पृष्ठ २८।

जनश्रुतियोंके अनुसार अकबर बादशाह तानसेनको लेकर मीरांबाई के दर्शनोंके लिये गये थे। प्रियादासने भी लिखा है—

रूपको निकाई भूप अकबर भाई हिये,
लिये संग तानसेन देखिबेको आये हैं।१

शरीर-त्याग

यदि इस जनश्रुतिपर विश्वास किया जाय, तो मीरांबाईकी मृत्यु-तिथि सन् १५४६ ई० माननेमें कठिनाई होती है, क्योंकि उस समय तो अकबरकी अवस्था केवल ४ वर्षकी ठहरती है, और उस अवस्थामें उसका मीरांबाईके दर्शनोंके लिये जाना कैसे सम्भव हो सकता है? इसलिये भारतेन्दु हरिश्चन्द्रने मीरांबाईकी मृत्यु-तिथि सन् १५६३ ई० और सन् १५७३ ई० के बीच मानी थी। उनका कहना था कि उन्होंने यह तिथि उदयपुर-दरबारकी सम्मतिसे निश्चित की थी। इसके अनुसार मृत्युके समय मीरांबाईकी अवस्था लगभग ७० वर्ष ठहरती है, जो असम्भव है। इसलिये अधिकांश विद्वान भारतेन्दु हरिश्चन्द्रकी तिथि ही अधिक सही मानते है। गुजराती 'बृहत् काव्य-दोहन' में भी मीरांबाईकी मृत्यु-तिथि सन् १५६३ और १५७३ ई० के बीच मानी गई है।२

---

१. भक्तमाल सटीक, पृष्ठ ७०२।

२. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तो मीरांना तानसेन तथा तुलसीदास साथे ना समागमोंने सत्य गणी मीरांनो शरीरत्याग संवत् १६२० थी १६३० मध्ये थयानु अनुमाने छे अने तेने बहुजने प्रामाणिक माने छे।—बृहत् काव्य-दोहन, भाग ७, पृष्ठ २४।

मीरांबाईकी रचनायें

पद

मीरांके पदोंकी कोई प्राचीन प्रामाणिक हस्तलिखित पोथी प्राप्त नहीं है और प्राप्त होनेकी कोई सम्भावना भी नहीं है। मीरांबाई प्रथमतः कवियित्री न होकर अनन्य प्रेमकी उपासिका थीं। बहुत सम्भवतः अपने गिरधरके आगे कीर्तन करते हुए वह प्रेमावेशमें अपने हृदयोद्गारोंको प्रकट करनेके लिये पद रचना करती रही होंगी। ये पद बहुत समय तक साधु-सन्तोंकी मण्डलीमें प्रचलित रहे, इन्हें लिपिबद्ध करनेका कोई प्रयत्न नहीं किया गया। यही कारण है कि आज मीरांबाईके पद स्थिर रूपमें नहीं मिलते। जिन क्षेत्रोंमें वे प्रचलित रहे हैं, वहांकी भाषाकी छाप उनपर स्पष्ट रूपसे दिखाई पड़ती है। मीरांबाईके पद मुख्यतया तीन रूपोंमें मिलते हैं—गुजरातीमें, राजस्थानी (डिंगल) में, तथा हिन्दीमें। इन तीनों प्रदेशोंसे मीरांबाईका सम्बन्ध रहा है। मेड़ता तथा मेवाड़में उनके जीवनका एक बड़ा भाग व्यतीत हुआ, ब्रजमण्डल उनके इष्टदेवकी क्रीड़ा-भूमि तो थी ही, वह कुछ समय वृन्दावनमें रही भी थीं, और उनके अन्तिम दिन काठियावाड़में, द्वारिकामें कटे थे। इसलिये इन तीनों प्रदेशोंकी बोलियोंके शब्द उनकी कवितामें मिलना अस्वाभाविक नहीं है। अतः भाषाकी कसौटीपर भी उनके पदोंकी प्रामाणिकता सिद्ध करना सम्भव नहीं है। फिर भी

उनकी विचार-धारा, उनके पदोंके वातावरण आदिका ध्यान रखते हुए उनके नामपर प्रचलित पदोंसे ऐसे पद अवश्य छांटे जा सकते हैं, जिनके सम्बन्धमें सम्भावना की जा सके कि वे उनके प्रतीक हो सकते हैं। खेद है कि किसी हिन्दी-विद्वानने यह कार्य अपने हाथमें नहीं लिया है।

मीरांबाईके पदोंका सबसे उत्तम संग्रह अभी तक बेलवेडियर प्रेसका है। इसमें १५० से कुछ अधिक पद हैं। गुजराती 'काव्य-दोहन' में मीरांबाईके लगभग १०० पद संग्रहीत हैं। इधर राजस्थानमें कुछ हिन्दी-विद्वान मीरांबाईके पदोंका संग्रह कर रहे हैं, और कहा जाता है कि ५०० पद तक संग्रहीत हो चुके हैं। इस संग्रहके प्रकाशमें आनेपर ही कहा जा सकेगा कि ये पद कहां तक प्रामाणिक कहे जा सकते हैं।

पदोंका वर्गीकरण

मीरांबाईके जो पद प्रकाशित हो चुके हैं, उन्हें हम नियमानुसार ५ वर्गोंमें बांट सकते हैं :

(१) विनय और प्रार्थनाके पद – इनकी संख्या थोड़ी ही है।

(२) विरह और प्रेमके पद -इनकी संख्या सबसे अधिक है।

(३) होली और सावन आदि शीर्षकोंके अन्तर्गत आनेवाले पद – इनमें रहस्यवादकी झलक पाई जाती है।

(४) सन्त वातावरणसे प्रभावित पद—काव्यकी दृष्टिसे इनका महत्व नहींके बराबर है। हां, मीरांबाईकी विचार-धाराका निरूपण करनेमें ये अवश्य सहायक हैं।

(५) जीवनपर प्रकाश डालनेवाले पद—इनमें अधिकांश पद 'राणा' को सम्बोधित हैं। पहले यह खयाल किया जाता था कि ये पद उन्होंने अपने पतिको सम्बोधित करके लिखे हैं। इसीसे अनुमान लगाया जाता था कि मीरांबाईका विवाहित जीवन सुखी नहीं था और उनका गिरधरका प्रेम दम्पति-प्रेममें बाधक था। पर नई खोजोंसे सिद्ध हो गया है कि मीरांबाई विवाहके कुछ ही साल बाद विधवा हो गई थीं, और उन्हें पीड़ा पहुंचानेवाले उनके देवर राणा विक्रमादित्य थे। अतः ये पद इन्हींको सम्बोधित मानना चाहिये। बहुत सम्भव है कि इस रूपमें मिलनेवाले बहुतसे पद बादमें उनके सम्बन्धमें प्रचलित किंवदन्तियोंके आधारपर रच लिये गये हों, इसलिये ऐसे पदोंकी प्रामाणिकता बहुत अधिक सन्दिग्ध है।

नरसीजी रो माहेरो

मीरांबाईकी रचनाओंमें उनके प्रकीर्णक पद ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं। पदोंके अलावा उनके नामपर प्रचलित कुछ अन्य रचनायें भी प्रकाशमें आई हैं, जिनमें 'नरसीजी रो माहेरो' मुख्य है। 'माहेरो' राजस्थान तथा गुजरातमें 'भात न्योतने' को कहते हैं। लड़की अथवा बहनकी सन्तानके विवाहके अवसरपर, उसके पिताके घरके लोग जो पहरावनी ले जाते हैं, उसे ही 'माहेरा' कहते हैं। इस पुस्तकमें गुजरातके प्रसिद्ध कवि नरसी मेहताका अपनी पुत्री नानोबाईके यहां 'माहेरा' ले जानेका

वर्णन है। पुस्तक मीरां और उनकी एक सखी 'मिथुला'में वार्त्तालापके रूपमें लिखी गई है। साहित्यिक दृष्टिसे यह पुस्तक महत्वपूर्ण नहीं है।

अन्य रचनायें

महामहोपाध्याय गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझाने लिखा है कि मीरांबाईने 'राग गोविन्द' नामसे कविताका एक ग्रन्थ रचा था, पर इस ग्रन्थका कोई पता नहीं चलता है। मिश्र-बन्धुओंने मीरांबाईके नामपर 'राग सोरठ पद संग्रह' नामक ग्रन्थका उल्लेख किया है। सोरठ रागके कुछ पद मीरांके प्रकाशित संग्रहोंमें भी मिलते हैं। पहले यह धारणा थी कि गीत गोविन्द'की टीका भी मीरांकृत है, पर अब प्रकट हुआ है कि वह महाराणा कुम्भकी बनाई हुई है। इसी प्रकार बहुत सम्भवतः मीरांबाईके नामपर प्रचलित अन्य रचनाओंकी भी परीक्षा करनेपर ज्ञात हो कि वे किसी अन्यकी रचनायें हैं।

मीरांबाईकी विचारधारा

मीरांबाईके समय प्रचलित विविध विचारधारायें

मीरांबाईके आविर्भावके समय उत्तर भारतमें भक्ति और ज्ञानकी अनेक धारायें प्रचलित थीं। मीरांबाईसे लगभग एक शताब्दी पूर्व कबीरका आविर्भाव हुआ था, और उनके पंथके साधु देशमें घूम-घूमकर 'निर्गुन'का प्रचार कर रहे थे तथा

जाति-पांत एवं कर्मकांडका खण्डन कर रहे थे। उनके साथ ही गोरखपन्थी साधु हठयोग द्वारा 'ब्रह्मानुभूति'का उपदेश दे रहे थे। वे इला, पिंगला और सुषुम्नाको साधकर 'त्रिकुटी महल' में 'प्रीतमकी सेज' बिछानेकी बातें किया करते थे। सूफी फकीर अवधी भाषामें प्रचलित प्रेम-गाथायें लिख-लिखकर 'प्रेमकी पीर' अथवा 'इश्कहकीकी' का प्रचार कर रहे थे। पर सर्वसाधारणमें इन सबसे अधिक प्रभाव रामानन्दी साधुओंका था, जो 'सीता-राम' की उपासनाका उपदेश देते थे। 'राम' शब्द उस समय तक ब्रह्मका पर्यायवाची मान लिया गया था और रामके अवतारमें विश्वास न करनेवाले लोग भी परम ब्रह्मका संकेत राम से करने लगे थे।

वृन्दावन उस समय कृष्ण-भक्तिका केन्द्र बना हुआ था। एक ओर तो महाप्रभु चैतन्यके शिष्य, जिनमें जीव गोसाईं मुख्य थे, श्रीकृष्णकी रागानुगा भक्तिका आदर्श रख रहे थे, दूसरी ओर वल्लभाचार्य श्रीकृष्णके अनुग्रहसे उनकी भक्ति प्राप्त होनेके सिद्धान्त का अपने पुष्टिमार्गका प्रतिपादन कर रहे थे। हरि-कीर्तनको लोकप्रिय बनानेका मुख्य श्रेय श्री चैतन्यके अनुयायियोंको ही था।

मीरांबाईसे कुछ ही पहले मिथिलामें कविवर विद्यापति जयदेव के 'गीत गोविन्द'की कोमलकांत पदावलीको देशी भाषासें उतार चुके थे। यद्यपि मीरांकी भांति उन्होंने सर्वथा कृष्ण-भक्तिसे प्रेरित होकर अपनी पदावली नहीं रची थी, उन्होंने मुख्यतया

साहित्यिक परिपाटीका पालन करते हुए अपनी काव्य-शक्ति प्रदर्शित करनेके लिये राधाकृष्णके प्रेमपर लेखिनी चलाई थी, फिर भी उनके पद चैतन्यदेवके अनुयायियोंमें बड़े भावसे गाये जाते थे।

इन सभी धाराओंकी लहरें साधु-संतोंके साथ मेड़ता और मेवाड़ भी पहुंचती रहती थीं। मीरांबाईके दादा राव दूदाजी स्वयं कृष्ण-भक्त थे और सत्संगके प्रेमी थे, अतः मीरांबाईको बाल्यकालमें ही अपने समयकी विविध विचार-धाराओंका परिचय हो गया था। यद्यपि मीरांबाईने अपनेको किसी सम्प्रदाय-विशेषके साथ नहीं बांधा, फिर भी उनके पदोंको देखने से स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने अपनी सारग्रहिणी प्रवृत्तिके अनुसार सभी विचार-धाराओं से कुछ-न-कुछ ग्रहण कर लिया था।

मीरांबाईके इष्टदेव

मीरांबाईने श्री गिरिधरलालको अपना इष्टदेव माना था और उनके लिये 'राम-रमैया', 'साहब', 'बाला' आदि सम्बोधनोंका प्रयोग वह पर्यायवाची शब्दके रूपमें किया करती थीं। उनके 'इष्टदेव' निर्गुणी संतोंके 'परब्रह्म'से कोई भिन्न वस्तु न थे। उन्होंने अपने 'गिरधर'को 'अविनासी' संज्ञा दी है और कहा है—

चंदा जायगा सुरज जायगा, जायगा धरण अकासी,
पवन पाणी दोनों ही जायेंगे, अटल रहे अविनासी।[१]

एक दूसरे पदमें उन्होंने अपने 'साहब'को 'आदि अनादी' बताया है—

१, पद ४२।

साहब पाया आदि अनादी, नातर भवमें जाती ।१

अपने इष्टदेवका निवास वह अपने हृदयमें ही मानती थीं—

मेरे पिय मो माहिं बसत हैं, कहूं न आती जाती ।२

उसकी प्राप्तिके लिये 'ज्ञानकी गुटकी' की आवश्यकता पड़ती है, जो सत्गुरुकी कृपासे मिलती है—

गुरु मिलिया रैदासजी, दीन्ही ज्ञानकी गुटकी ।'३

'ज्ञानकी गुटकी' मिल जानेपर 'जनम-जनमका सोया मनुवां' जाग जाता है—

जनम-जनमका सोया मनुवां, सतगुर शब्द सुण जागा ।४

सम्भवतः मीरांबाईने अपनी साधनाके प्रारम्भमें निर्गुणी संतोंके प्रभावमें हठयोगसे ब्रह्मानुभूतिका प्रयास किया था। इसीलिये उन्होंने अपने कुछ पदोंमें 'त्रिकुटी महल' (ब्रह्म-रंध्र) में बने हुए झरोखेसे झांकी लगाकर देखने तथा 'सुन्न महल' में 'सुरत जमाने' और 'सुखकी सेज' बिछानेकी चर्चा की है—

त्रिकुटी महलमें बना है झरोखा, तहांसे झांकी लगाऊं री ।

सुन्न महलमें सुरत जमाऊं, सुखकी सेज बिछाऊं री ।५

कबीर आदि संतोंकी भांति उन्होंने भी 'अगमके देस' चलनेकी इच्छा प्रकट की है, जहां शुद्ध आत्मा प्रेमके सरोवरमें केलि किया करता है—

चलो अगमके देस काल देखत डरे ।
वहं भरा प्रेमका हौज हंस केला करे ।६

---

१. पद १३१ । २. पद ४२ । ३. पद १६० । ४. पद ४५ ।
५. पद १३७ । ६. पद १२८ ।

माधुर्य भावसे उपासना

पर साधनाका यह मार्ग सम्भवतः उनकी प्रवृतिके अनुकूल नहीं था, इसलिये वह उनसे निभ नहीं सका। उन्हें 'माधुर्य भाव' से अपने इष्टदेवकी उपासना अधिक रुचिकर हुई।

भक्त लोग पत्नीके रूपमें परमेश्वरकी उपासना भक्तिका चरम विकास मानते हैं। इसका सर्वोत्कृष्ट दृष्टान्त कृष्णके प्रति गोपिकाओंका अनन्य प्रेम बताया जाता है। देवर्षि नारदने भी भक्तिकी व्याख्या करते हुए कहा है -

'भक्ति परम प्रेमरूपा, यथा व्रजगोपिकानाम्।'

विघ्न-बाधाओंको पार करके अपने प्रियतमसे मिलनेकी जो आतुरता परकीयामें दिखाई पड़ती है, वह स्वकीयामें नहीं प्रकट होती। सम्भवतः इसीलिये आचार्योंने परकीयाका प्रेम ('यथा व्रजगोपिकानाम्') भक्तिकी पराकाष्ठा मानी है।

इस 'भाव'को प्राप्त कर लेनेपर भक्त हर समय अपने आराध्यके ध्यानमें मग्न रहने लगता है। उसका शरीर लौकिक कार्योंमें भी फँसा रहनेपर उसका मन प्रभुका स्मरण किया करता है। मीरांने भी कहा है—

मैं तो म्हांरा रमैयाने देखवो करूं री।
तेरो ही उमरण तेरो ही सुमरण, तेरो ही ध्यान धरूं री।
जहां जहां पांव धरूं धरणीपर, तसां तहां निरत करूं री।[१]

'जहां जहां पांव धरू धरणी पर, तसां तहां निरत करूं री'में

१. पद ५३।

मीरांकी चरम तल्लीनता प्रकट होती है। इससे विदित होता है कि वह साधनाकी उस चरम सीढ़ीपर पहुंच गई थीं, जब 'प्रभु-मय सब जग जानी' केवल कल्पनाकी वस्तु नहीं रह गई थी, वह उनके लिये एक अनुभूत सत्य था।

साधनाकी इस ऊंची सीढ़ीपर पहुंचकर स्वभावतया उन्हें लोकलज्जा अथवा लोकनिंदाका कोई ध्यान नहीं रह गया था। जब उन्होंने संसारसे वैराग्य धारण कर लिया, भक्तिके लिये अपने भाई-बन्धु छोड़ दिये, साधुओंका सत्संग लिया, तब लोकलज्जासे उनका क्या नाता !

मेरे तो एक राम नाम दूसरा न कोई।
दूसरा न कोई साधो सकल लोक जोई।
भाई छोड्या, बन्धु छोड्या, छोड्या सगा सोई।
साध संग बैठ-बैठ लोकलाज खोई।[1]

इसी पदमें वह आगे कहती हैं—

अब तो बात फैल पड़ी जाणे सब कोई।
मीरा राम लगण लगी होणी होय सो होई।[2]

'होणी होय सो होई' में लोकके प्रति मीरांका नितान्त उपेक्षा-भाव स्पष्ट रूपसे दृष्टिगोचर होता है। इसीलिये 'लोगोंके बिगड़ी' कहनेपर भी उन्होंने कोई शिकायत नहीं की।

नैणा मोरे बाण पड़ी, साईं मोहिं दरस दिखाई।
चित चढ़ी मेरे माधुरि मूरत, उर बिच आन अड़ी।
कैसे प्राण पिया बिनु राखूं, जीवण मूर जड़ी।

१. पद ४। २. पद वही।

कबकी ठाढ़ी पंथ निहारूं, अपणे भवन खड़ी।
मीरा प्रभुके हाथ विकानी, लोक कहे बिगड़ी।'[१]

उनका हृदय प्रतिपल अपने प्रभुके बिछोहमें तड़पता रहता था। उन्होंने अपनी इस आध्यात्मिक तड़पनका, 'प्रेमकी पीर' का बड़ा ही हृदयग्राही वर्णन किया है—

सखी मेरी नींद नसानी हो।
पियाको पंथ निहारते, सब रैन बिहानी हो।
सखियन मिलके सीख दई, मन एक न मानी हो।
बिन देखे कल ना परे, जिय ऐसी ठानी हो।
अंग छीन व्याकुल भई, मुख पिय-पिय बानी हो।
अंतर वेदन विरहकी, वह पीर न जानी हो।
ज्यों चातक घनको रटे, मछरी जिमि पानी हो।
मीरां व्याकुल विरहनी, सुध-बुध विसरानी हो।[२]

'अंतर वेदन विरहकी, वह पीर न जानी हो' इस भावको उन्होंने एक दूसरे पदमें और स्पष्ट करके कहा है—

घायलकी गति घायल जाने, की जिन लाई होय।
जौहरीकी गत जौहरी जाने, की जिन जौहर होय।[३]

इस प्रेमकी 'पीर'को दुनियाके लोग नहीं समझते। इसे तो ऊंची साधनामें रत आत्मायें ही अनुभव करती हैं। अपने 'प्रियतम' के बिना मीरां व्याकुल थीं—

---

१. पद ८६। २. पद ७६। ३. पद ३४।

साधन सुध ज्यूं जाने त्यूं लीजे हो।
तुम बिन मेरे और न कोई कृपा रावरी कीजे हो।
दिवस न भूख रैन नहिं निद्रा यूं तन पल-पल छीजे हो।
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर मिल बिछुरन नहिं कीजे हो।१

कबीरने भी अपनी 'व्याकुलता' कुछ इन्हीं शब्दोंमें व्यक्त की है—

तलफै बिन बालम मोर जिया।
दिन नहिं चैन रात नहिं निंदिया तड़फ-तड़फ के भोर किया।
तन मन मोर रहट अस डोलै सूनि सेज पर जनम छिया।
नैन थकित भये पंथ न सूझै साईं बेदरदी सुध न लिया।
कहत कबीर सुनो भाई साधो हरो पीर दुख जोर किया।

मीरांको 'बिस्वा बीस' विश्वास था कि गिरिधरने स्वप्नमें उनका पाणिग्रहण किया—

माई म्हांने सुपनेमें बरण गया जगदीस।
सोतीको सुपना आविया जो, सुपना बिस्वा बीस। २

गिरिधर उनके 'नव-भव के भरतार' थे—

कैसे तोड़ूं राम सूं, म्हांरो मो सो रो भवतार। ३

इसीलिये उन्होंने अपनी प्रीत 'पुरबली' बताई है—

राणाजी म्हांरी प्रीत पुरबली मैं क्यां करूं। ४

---

१. पद ८४. २. पद १४७. ३. पद १५३. ४. पद १७१.

इसी 'प्रीत पुरवली' के बलपर वह कभी-कभी अपने 'प्रियतम' को उपालम्भ भी दे बैठती थीं—

स्याम मोंसू ऐंडो डोले हो।
औरन सूं खेले धमार, म्हां सू मुखहुं न बोले हो।
म्हांरी गलियां ना फिरे, वाके आंगण डोले हो।
म्हांरी अंगुली ना छुवे, वाको बहियां मोरे हो।
म्हांरे अंचरा ना छुवे, वाको घूंघट खोले हो।
मीराको प्रभु सांवरो, रंग-रसिया डोले हो।[१]

भक्तोंमें यह धारणा बँधी चली आ रही है कि मीरांबाई ललिता नामकी गोपिकाकी अवतार थीं। मीरांने भी अपने एक पदमें अपनेको 'गोकुल अहीरणी' कहा है—

ऐसी प्रीत करे सोई, दास मीरा तरै जोई।
पतित-पावन प्रभु, गोकुल अहीरणी।[२]

इसमें संदेह नहीं है कि मीरांबाईमें अपने गिरिधर लालके प्रति जो अनन्य प्रेम लक्षित होता था, वह किसी गोपबालासे कम न था। इसीलिये नाभादास आदि भक्तोंने मीरांबाईका परिचय देते हुए कहा है—

लोक-लाज कुल-शृंखला तजि मीरां गिरिधर भजी।
सदृश गोपिका प्रेम प्रगट कलयुगहिं दिखायो।[३]

कबीर आदि जब अपनेको 'रामकी बहुरिया' कहते हैं, तो

---

१. पद १११. २. पद २५. ३. भक्तमाल सटीक, पृ० ६९४.

उसमें एक कृत्रिमता मालूम पड़ती है; पर मीरांबाईका यह कथन जरा भी नहीं खटकता—

मेरे गिरधर गुपाल दूसरो न कोई।
जाके सिर मोर-मुकुट मेरो पति सोई। १

जब वह कहती हैं—

तुम्हरे कारण सब सुख छोड्यो, अब मोहिं क्यूं तरसावो। २

तो उसमें जरा भी अतिशयोक्ति नहीं प्रकट होती, क्योंकि यह तो उनके जीवनपर घटित होनेवाला वर्णन है।

रहस्यवाद

मीरांबाईने अपने कुछ पदोंमें परमात्मासे अपने तादात्म्यकी अनुभूतिका अथवा परमात्मासे मिलनकी उत्कण्ठाका वर्णन किया है, जिनमें रहस्यवादकी झलक दिखाई पड़ती है। कहीं-कहीं तो उनका यह वर्णन कबीर आदि निर्गुणवादी सन्तोंकी भांति रूढ़िगत हो गया है। जैसे—

बिन करताल पखावज बाजे, अनहद्की झनकार रे।
बिन सुर राग छतीसूं गावे, रोम-रोम रंग सार रे। ३

पर अधिकांशतया उनका वर्णन अनुभूति-मूलक है। सारी सृष्टि प्रभुसे मिलनेके लिये नया रूप धर लेती है। इस महामिलन की मंगल सूचना देनेके लिये दादुर, मोर और पपीहा अपनी पंचम तान छेड़ देते हैं, रिमझिम पानी बरसता है। ऐसे समयमें

---

१. पद ३५. २. पद ९४. ३. पद ११२.

स्वभावतया मीरांके हृदयमें भी अपने प्रभुसे मिलनकी इच्छा तीव्र हो उठती है, उनका हृदय कहता है कि प्रभु पधारनेवाले हैं—

सुनी मैं हरि आवन की आवाज।
महल चढ़ि-चढ़ि जोऊं मोरी सजनी, कब आवे म्हाराज।
दादुर मोर पपीहा बोलै, कोइल मधुरे साज।
उमग्यो इन्द्र चहूं दिस बरसै, दामिन छोड़ी लाज।
धरती रूप नवानवा धरिया, इन्द्र-मिलनके काज।
मीराके प्रभु गिरिधर नागर, वेग मिलो म्हाराज। १

इसी प्रकार मधुमासमें, होलीके अवसरपर, जब सब लोग आनन्द-मंगल मनाते हैं झांझ-मृदंग बजाकर नृत्य करते हैं, मीरां खड़ी-खड़ी अपने 'पिया' का मग जोहती हैं—

होली पिया बिन मोहिं न भावे,
घर आंगण न सुहावे।
दीपक जोय कहां करूं हेली, पिय परदेस रहावे।
सूनी सेज जहर ज्यूं लागे, सुसक-सुसक जिय जावे।
नींद नैन नहिं आवे।
कब की ठाढ़ी मैं मग जोऊं, निस दिन विरह सतावे।
कहा कहूं कुछ कहत न आवे, हिवड़ो अति अकुलावे।
पिया कब दरस दिखावे।

---

१. पद १२२.

ऐसा है कोइ परम सनेही, तुरत संदेसो लावे।
वा बिरियां कब होसी मोकूं हँसकर निकट बुलावे।
मीरा मिल होली गावे। १

मीरांमें काव्यत्व

पद-रचनाकी परम्परा

मीरांकी सारी कविता गेय है और पदोंके रूपमें है। इसका कारण यह है कि वह हरिके आगे कीर्तन करनेके निमित्त लिखी गई थी। उसमें प्रारम्भमें एक टेक रखकर तीन-चार चरण जोड़ दिये जाते हैं। सम्पूर्ण पद किसी राग-रागिनीके अन्तर्गत रचा जाता है। इस प्रकार मुक्त पदोंमें काव्य-रचनाकी परम्परा संस्कृतके प्रसिद्ध कवि जयदेवसे आरम्भ होती है, और मैथिलीमें विद्यापति तथा गुजरातीमें नरसी मेहताने भी उन्हींके अनुकरण पर रचनायें की थीं।

गीति-काव्यकी जन्मदात्री

मीरांबाई हिन्दी-गीति-काव्यकी जन्मदात्री कही जा सकती हैं। गीति-काव्यमें व्यक्तिगत निर्देश अथवा आत्म-निवेदनकी प्रधानता होनी चाहिये। मीरांबाईने अपने अधिकांश पदोंमें अपने स्वजनों के अत्याचारोंका, राणाके विषका प्याला तथा सांपका पिटारा

१, पद ११५,

भेजने आदिका और अपनी विरहजन्य आकुलताका (उनका विरह लौकिक नहीं, वरन परमात्मासे आत्माके बिछुड़नसे उत्पन्न पारलौकिक था) वर्णन किया, जिससे उनके पदोंपर उनके व्यक्तित्वकी एक विशेष छाप लग गई है।

आलम्बनका स्वरूप

उनके सभी पदोंके आलम्बन गिरिधर लाल हैं, जिन्हें उन्होंने राम, रमैया, हरि, गोविन्द, नन्दनन्दन, कान्हा, सइयां आदि नामोंसे भी सम्बोधित किया है। उनके श्रीकृष्ण सूरदासके बालकृष्ण नहीं, वरन प्रौढ़ कृष्ण हैं। सूरदासकी भक्ति 'सख्य भाव' की थी, अतः उनका ध्यान श्रीकृष्णकी बाल-लीलाओं की ओर जाना स्वाभाविक था; पर मीरांबाईकी भक्ति 'माधुर्य भाव की थी, अतः उनके आलम्बन प्रौढ़ श्रीकृष्ण ही हो सकते थे। सूरदास 'घुटुरन चलत रेनु तन-मण्डित मुख दधिलेप किये' द्वारा श्रीकृष्णके बाल-चापल्यका चित्र हमारी आंखोंके सामने प्रस्तुत करते हैं; पर मीरांके श्रीकृष्ण 'मोर-मुकुट पीतम्बरो गल वैजन्ती माल' पहने 'कालिन्दीके तीर' गौयें चराते हैं और गोपियोंके साथ क्रीड़ा करते हैं। १

मीरांका श्रीकृष्णको जगाना भी देखिये—यह जगाना यशोदा का कृष्णको जगानेके समान नहीं है, बल्कि एक ललनाका अपने पतिको जगानेके समान है।

१, पद ३३.

जागो बंसीवारे ललना, जागो मेरे प्यारे।
रजनी बीती भोर भयो है, घर-घर खुले किवारे।
गोपी दही मथत सुनियत हैं, कंगना के झनकारे। १

रजनी बीत चली, प्रभात हो गया, घर-घरके दरवाजे खुल गये। गोपियोंके दही मथनेकी आवाज आ रही है, उनके कंगनों की झनकार सुनाई पड़ रही है। मीरांके श्रीकृष्ण उनकी सेजपर पड़े सो रहे हैं। मीरां अपने प्राणवल्लभको इसलिये जगा रही हैं कि कहीं सखियां यह देखकर उन्हें चिढ़ावें न।

मीरांने अपने आलम्बनका स्वरूप निम्नप्रकार अंकित किया है—

वसो मेरे नैननमें नन्दलाल।
मोहनी मूरति संवरि सूरति, बने नैन विसाल।
अधर सुधा रस मुरली राजित, उर बैजन्ती माल।
छुद्र घंटिका कटि तटि सोभित, नूपुर सब्द रसाल।
मीरा प्रभु सन्तन सुखदाई, भक्त-वछल गोपाल। २

अनुभावोंका चित्रण

अपने आलम्बन श्रीगिरिधर लालके प्रति मीरांवाईके हृदयमें जो रति थी, वही उनके पदोंमें विविध विभावानुभावादिसे पुष्ट होकर व्यक्त हुई है। मीरांवाईके पदोंमें व्यभिचारी भावोंका चित्रण बहुत कम है, अनुभावोंका ही चित्रण अधिक है। इन पदोंमें हमें उनके मानसकी स्पष्ट झाँकी मिलती है।

---

१. पद ३७. २. पद १८.

वे उठते-बैठते रामका नाम लेती हैं—

मीरा बैठी महलमें रे, उठत बैठत राम । १

सीप भर पानी और टांक भर अन्न खाकर अपना दिन बिताती हैं—

सीप भर्‌यो पाणी पिवे रे, टांक भर्‌यो अन्न खाय । २

अपने 'पिया'के लिये जोगिन बनने तथा काशी जाकर करवत लेनेका निश्चय करती हैं—

तेरे खातर जोगण हूंगी, करवत लूंगी कासी । ३

कभी उनके मनमें चंदनकी चितापर जल-बलकर भस्म हो जानेकी इच्छा होती है—

अगर चंदणकी चिता बणाऊं, अपणे हाथ जला जा ।
जल-बल भई भस्म की ढेरी, अपणे अंग लगा जा ॥४

वे अपने 'पिया' से सदा अपने नयनोंके आगे रहनेकी प्रार्थना करती हैं—

पिया जी म्हारे नैणा आगे रहज्यो जी ।
नैणा आगे रहज्यो, म्हाने भूल मत जाज्यो जी ।५

इन सभी चित्रोंमें उनके प्रेमानुरक्त हृदयकी स्पष्ट झांकी मिलती है ।

१, पद १५३, २, वही ३, पद ८३, ४, पद १३९, ५, पद १६,

विरह-वर्णन

काव्यकी दृष्टिसे मीरांका विरह-वर्णन सर्वोत्कृष्ट है। उन्होंने अपने 'प्रियतम' के वियोगमें अपने हृदयकी जिस आकुलताका चित्रण किया था, वह उधार ली हुई नहीं थी, इसीलिये उनमें इतनी स्वाभाविकता आ गई है।

पपीहाको सम्बोधनकर वे कहती हैं—

पपइया रे पिवकी बाणि न बोल।
सुणि पावेली बिरहणी, थाड़ो रालैली आंख मरोड़।
चांच कटाऊं पपइया रे ऊपरि कालर लूण।
पिव मेरा मैं पीवकी रे, तू पिव कहै सकूण।
थारा सबद सुहावणा रे, जो पिव मेला आज।
चांच मढ़ाऊं थारी सोवनी रे, तू मेरे सिरताज।
प्रीतम कूं पतियां लिखूं, कउवा तू ले जाइ।
जाइ प्रीतम जी सूं यूं कहै रे, थारी बिरहीण अन्न न खाइ।
मीरां दासी व्याकुली रे, पिव-पिव करत बिहाइ।
बेगि मिलो प्रभु अन्तरजामी, तुम बिन रह्योही न जाइ।[१]

अपने प्रितमके वियोगमें वे रात-भर सूनी सेजपर अपलक बैठी आंसुओंकी माला पिरोया करती हैं—

मैं बिरहिन बैठी जागूं, जगत सब सोवै री आली।
बिरहिन बैठी रंगमहलमें, मोतियनकी लड़ पोवै।

---

१. पद ८०,

इक विरहिन हम ऐसी देखी, अंसुअनकी माला पोवै।
तारा गिण-गिण रैन बिहानी, सुखकी घड़ी कब आवै।
'मीरा' के प्रभु गिरधर नागर, मिलके बिछुड़ न जावै।१

होली आदिक मंगल त्योहारोंपर जब सब ओर आनन्द तथा उत्साहकी लहर दौड़ जाती है, उन्हें अपने 'पिया' के बिना 'अटारी' सूनी लगती है और होली फीकी लगती है—

होली पिया बिन लागै खारी, सुनो री सखी मेरी प्यारी।
सूनो गांव देस सब सूनो, सूनी सेज अटारी।
सूनी बिरहन पिव बिन डोलै, तज दइ पीव पियारी।
भई हूं या दुखकारी।
देस बिदेस संदेस न पहुंचै, होय अंदेसा भारी।
गिणतां-गिणतां धस गईं रेखा, आंगरियाकी सारी।
अजहुं नहिं आये मुरारी।
बाजत झांझ-मृदंग मुरलिया, बाज रही इकतारी।
आई बसन्त कंथ घर नाहीं, तनमें जर भया भारी।
स्याम मन कहा बिचारी।२

प्रियतमके अभावमें बादलोंको बरसते देख उनके नयनोंसे भी झड़ी लग जाती है—

बादल देख झरी हो, स्याम मैं बादल देख झरी।
काली-पीली घटा उमँगी, बरस्यो एक घरी।

१, पद ८२, २, पद ११४,

जित जाऊं तित पानिहि पानी, हुई सब भोम हरी।

जाका पिव परदेस बसत है, भीजै बार खरी।१

कहीं-कहीं उन्होंने अपनी विरहजन्य व्याकुलता प्रदर्शित करनेके लिये अंगुलीकी मुंदरी ढीली पड़कर बांहमें आ जाने (आंगुलियांकी मूंदड़ी म्हारे आवण लागी बांहि) तथा पान जैसी पीली पड़ जाने (पानां ज्यूं पीली पड़ी रे, लोग कहै पिंड रोग)२ आदिका परम्परागत वर्णन किया है; पर इन वर्णनोंमें भी उनकी सहानुभूतिका पुट है, जिससे वे अस्वाभाविक नहीं होने पाये हैं।

संयोग-वर्णन

मीरांने संयोग-वर्णन बहुत थोड़ा किया है, सन्तोंके प्रभाव में उन्होंने कहीं-कहीं ब्रह्मानुभूतिके वर्णन किये हैं, जिनमें रहस्य-वादकी झलक आ गई है। ये वर्णन पूर्णतया परम्परागत हैं, और उनमें स्वानुभूतिकी बहुत थोड़ी मात्रा दिखाई पड़ती है।

अलंकार-विधान

मीरांके वर्णनोंमें यत्र-तत्र अलंकार भी स्वाभाविक रीतिसे आ गये हैं। उनको रखनेके लिये उन्होंने कभी कोई प्रयास नहीं किया। कहीं-कहीं उनके पदोंमें नन्ददासकी भांति अनुप्रासों की छटा आ गई है—

कुंडलकी अलक झलक कपोलन पर छाई।

१, पद ११९, २, पद ७३,

मनो मीन सरवर तजि मकर मिलन आई । १

उपमायें (जैसे, पानां ज्यूं पीली पड़ी रे) २ तथा उत्प्रेक्षायें (जैसे, मनो मीन सरवर तजि मकर मिलन आई) ३ तो वर्णन-शैलीके स्वाभाविक अंग हैं, उनके लिये प्रयासकी आवश्यकता नहीं पड़ती ।

मीरांने कहीं-कहीं सुन्दर रूपक बांधे हैं, जैसे—

या तनको दियना करों मनसा करों वाती हो ।

तेल भरावों प्रेमका वारों दिन रातीं हो । ४

इसके अलावा ढूंढ़नेपर उनके पदोंमें श्लेप, विभावना, दृष्टान्त आदि अनेक अनुप्रासोंके उदाहरण मिल जायेंगे । स्वभावोक्ति तो उनके पदोंमें भरी पड़ी है ।

छंद

मीरांकी कविता सम्भवतः पिंगलादि नियमोंको ध्यानमें रखकर नहीं लिखी गई थी, इसीलिये उसमें बहुधा मात्रामें घटती-बढ़ती अथवा यतिभंग-दोष दिखाई पड़ता है । नियमोंकी पूर्ण उपेक्षाके कारण कहीं-कहीं तो यह कहना कठिन हो जाता है कि उनकी अमुक पंक्ति किस छंदके अनुसार है । गीति-काव्य होनेके कारण उनकी कवितामें छंदोंकी वह विविधता नहीं है, जो तुलसी, केशव आदि उनके परवर्ती कवियोंमें दिखाई पड़ती है । हां, उनके पदोंमें राग-रागनियोंकी विविधता खूब है । मीरांका मलार

१, पद ३२, २, पद ७३, ३, पद ३२, ४, पद ७४

राग विशेष रूपसे प्रसिद्ध है। कल्याण, मारू आदि रागोंमें भी उनके बड़े सुन्दर-सुन्दर भजन हैं।

मीरांकी भाषा

मीरांका सम्बन्ध चार प्रदेशोंसे रहा था—मेड़ता, मेवाड़, ब्रज तथा गुजरात। अतः इन चारों ही प्रदेशोंकी भाषाओंके शब्द उनके पदोंमें पाये जाते हैं। इसके अलावा उनमें कुछ फारसी शब्द भी पाये जाते हैं—जैसे दीदार, नजर, तकसीर, हाजिर, नाजिर, मरजी आदि।

उनका सबसे अधिक सम्बन्ध मेड़ता तथा मेवाड़से रहा, इसीलिये उनके पदोंपर स्वभावतया इन प्रदेशोंकी भाषाकी गहरी छाप दिखाई पड़ती है। उनके पदोंको समझनेके लिये राजस्थानीके व्याकरणकी कुछ विशेषताओंको समझ लेना आवश्यक है।[१]

संज्ञा

हिन्दीके प्रायः सभी पुल्लिंग आकारान्त शब्द राजस्थानीमें ओकारान्त हो जाते हैं, और उनका बहुवचन हिन्दीकी भांति एकारान्त न होकर आकारान्त होता है, जैसे म्हांरोसे म्हांरा, रूठ्योसे रूठ्या आदि।

आकारान्त स्त्रीलिंग शब्दोंका बहुवचन आं तथा आवां प्रत्यय लगाकर बनाया जाता है, जैसे मालासे मालां अथवा मालावां।

---

१. मीरांबाईकी पदावलीके आधारपर।

इकारन्त तथा ईकारान्त स्त्रीलिंग शब्दोंके वहुवचन यां अथवा इयां प्रत्यय लगाकर वनाये जाते हैं, जैसे सहेलीसे सहेल्यां अथवा सहेलियां।

उकारान्त तथा ऊकारान्त स्त्रीलिंग शब्दोंके वहुवचन वां तथा उवां प्रत्यय लगाकर वनते हैं।

अन्य शब्दोंके वहुवचन प्रायः एकवचनके समान होते हैं। अकारान्त शब्दोंका वहुवचन आं प्रत्यय लगाकर वनाते हैं, जैसे नैणसे नैणां।

राजस्थानीमें संज्ञाके विकारी रूपोंके साथ निम्न विभक्ति-चिह्न लगाये जाते हैं :—

करण तथा अपादान कारक—सूं, सैं, सौं, तैं—जैसे म्हांसू म्हांसे, म्हांसो आदि।

कर्म तथा सम्प्रदान कारक—नूं, नुं, ने, कू, कौ—जैसे रमैयानूं रमैयाने, रमैयाकू आदि।

अधिकरण कारक—मैं, नें, नां, मांहि आदि।

सम्वोधन कारक—रो, री, नो, नी—जैसे संतोरी, संतोनो आदि।

सर्वनाम

उत्तम पुरुप 'हूं':—

कर्त्ता कारक—म्हें, म्हां।

करण तथा अपादान—मोसूं, म्हांसू।

कर्म तथा सम्प्रदान—मने, म्हांने, मोकूं।
अधिकरण—मोपरि।
सम्बन्ध— मो, म्हांरो, म्हांरा।
मध्यम पुरुष 'तू':—
कर्त्ता कारक—थे।
करण तथा अपादान—तोसूं, तोसें।
कर्म तथा सम्प्रदान—थांने, तोइ।
सम्बन्ध—थारो, थांरो, थांको।

क्रिया

१. वर्त्तमान व विधि—

	उत्तम पुरुष,	मध्यम पुरुष	अन्य पुरुष
एकवचन—	जाऊं, जोऊं	जाज्यो, राखज्यो	सतावै
बहुवचन—	जांता, करां,	न्हालो, आवो,	बसत है, जाणत है

२. भविष्यत्—

	उत्तम पुरुष	मध्यम पुरुष	अन्य पुरुष
एकवचन—	देस्यूं,	जासी	पावेती
बहुवचन—	धमकास्यां	करोता	देहैं

३. हेतुहेतुमद्भूत—
एकवचन—जाणती, फेरती।

४. सामान्यभूत (अकर्मक क्रिया)—

एकवचन—	डरी, चली	परी, नासी
बहुवचन—	······	मिल्या, आया, बोल्या

५. सामान्यभूत (सकर्मक क्रिया)—

एकवचन—	जाणी, लिये	मोकल्यो
बहुवचन—	··· ···	गमाया, करिया

उपसंहार

हिन्दी-साहित्यमें मीरांबाईका नाम सदा आदरसे लिया जायगा। वह हिन्दी-गीत-काव्यकी जन्मदात्री थीं। उन्होंने अपने गिरधरके अनन्य प्रेमकी जो धारा बहाई, वह आज उत्तर-भारतके घर-घरमें व्याप्त है। सर्वसाधारणमें उनका नाम तुलसी और सूरके बाद ही लिया जाता है। उनकी प्रेम-वाणीकी तुलना ग्रीक कवियत्री सैफो अथवा ईसाई भक्तिन टेरेसा अथवा सूफी साधिका रबियासे की जाती है। उनकी वाणीमें अलौकिक बल तथा पुरुषार्थका सन्देश है। उनका सारा जीवन अनेक विघ्न-बाधाओंका चट्टानकी तरह निर्भय होकर सामना करते हुए अपने पथपर अचल-अटल रहनेका एक परमोत्कृष्ट उदाहरण है। राणाने उन्हें विषका प्याला भेजा, साँपका पिटारा भेजा, सूलकी सेज भेजी ; पर वह अपने मार्गसे विचलित न हुईं। उन्होंने अपने मनमें यह बांध रखा था 'होणी होय सो होई', फिर भला उन्हें कौन अपने निश्चयसे डिगा सकता था। गर्दन हथेलीपर धर कर घूमनेवालोंकी गर्दन कोई नहीं उतार सकता। भय ही मृत्यु है ; पर जब मनुष्य निर्भय होकर किसी बातपर कमर कस लेता है, तो वह मृत्युञ्जयी बनता है। मीरांके जीवनका यही अजर-अमर सन्देश है।

मीरांबाईकी पदावली

खण्ड १

विनय और प्रार्थना

(१)

राग तिलंग

मन रे परसि हरि के चरण ।। टेक ।।
सुभग सीतल कँवल कोमल, त्रिविधि ज्वाला हरण ।
जिण चरण प्रहलाद परसे, इन्द्र पद्वी धरण ।।
जिण चरण ध्रुव अटल कीणे, राखि अपणी सरण ।
जिण चरण ब्रह्मांड भेट्यो, नख सिख सिरी धरण ।।
जिण चरण प्रभु परसि लीणो, तरी गोतम घरण ।
जिण चरण काली नाग नाथ्यो, गोपि लीला करण ।।
जिण चरण गोबरधन धार्यौ, इन्द्र कौ गर्व हरण ।
दासि मीरा लाल गिरधर, अगम तारण तरण ।।

(२)

राग छायानट

भज मन चरन कँवल अविनासी ॥ टेक ॥
जेताइ दीसे धरनि गगन विच, तेताइ सब उठि जासी ।
कहा भयो तीरथ व्रत कीन्हे, कहा लिये करवत कासी ॥
इस देही का गरव न करना, माटी में मिल जासी ।
यो संसार चहर की बाजी, साँझ पड़्याँ उठि जासी ॥
कहा भयो है भगवा पहर्याँ, घर तज भये सन्यासी ।
जोगी होय जुगति नहिं जानी, उलटि जनम फिर आसी ॥
अरज करों अबला कर जोरे, स्याम तुम्हारी दासी ।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, काटो जम की फाँसी ॥

(३)

भज ले रे मन गोपाल गुणा ॥ टेक ॥
अधम तरे अधिकार भजन सूँ, जोइ आये हरि की सरणा ।
अविस्वास तो साखि बताऊँ, अजामेल गणिका सदना ॥
जो कृपाल तन मन धन दीन्हों, नैन नासिका मुख रसना ।
जाको रचत मास दस लागे, ताहि न सुमिरो एक छिना ॥
बालापन सब खेल गंवाया, तरुन भयो जब रूप घना ।
वृद्ध भयो जब आलस उपज्यो, माया मोह भयो मगना ॥
गज अरु गीदहु तरे भजन सूँ, कोऊ तर्यो नहिं भजन बिना ।
धना भगत पीपा पुनि सेवरी, मीरा की हूँ करो गनना ॥

(४)

मेरे तो एक राम नाम दूसरा न कोई।
दूसरा न कोई साधो सकल लोक जोई॥ टेक॥
भाई छोड़्या बँधु छोड़्या छोड़्या सगा सोई।
साध संग बैठ बैठ लोक लाज खोई॥
भगत देख राजी हुई जगत देख रोई।
प्रेम नीर सींच सींच विष बेल धोई॥
दधि मथ घृत काढ़ लियो डार दई छोई।
राणा विष को प्याल्यो भेज्यो पाय मगन होई॥
अब तो बात फैल पड़ी जाणे सब कोई।
मीरा राम लगण लगी होणी होय सो होई॥

(५)

राग झिंझोटी

मेरे गिरधर गुपाल दूसरो न कोई॥ टेक॥
जाके सिर मोर मुकट मेरो पति सोई।
तात मात भ्रात बंधु अपना नहिं कोई॥
छाँड़ दई कुल की कान क्या करिहै कोई।
संतन ढिग बैठि बैठि लोक लाज खोई॥
चुनरी के किये टूक टूक ओढ़ लीन्ह लोई।
मोती मूँगे उतार बन माला पोई॥

अँसुवन जल सींच सींच प्रेम वेल. वोई।
अव तो वेल फैल गई आनँद फल होई॥
दूध की मथनिया वड़े प्रेम से विलोई।
माखन जव काढ़ि लियो छाछ पिये कोई॥
आई मैं भक्ति काज जगत देख मोही।
दासी मीरा गिरधर प्रभु तारो अव मोही॥

(६)

राग प्रभाती

म्हांरो जनम मरन को साथी, थांने नहिं विसरूँ दिन राती॥टेक॥
तुम देख्यां विन कल न पड़त है, जानत मेरी छाती।
ऊँची चढ़ चढ़ पंथ निहारूँ, रोय रोय अँखियां राती॥
यो संसार सकल जग झूँठो, झूँठा कुलरा नाती।
दोउ कर जोड़्यां अरज करत हूँ, सुण लीज्यो मेरी वाती॥
यो मन मेरो वड़ो हरामी, ज्यूँ मदमातो हाथी।
सतगुरु दस्त धर्‌यो सिर ऊपर, आंकुस दे समझाती॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, हरि चरणां चित राती।
पल पल तेरा रूप निहारूँ, निरख निरख सुख पाती॥

(७)

मेरे मन राम नामा वसी।
तेरे कारण स्याम सुंदर सकल लोगां हँसी॥
कोई कहे मीरा भई वौरी कोई कहे कुल-नसी।
कोई कहे मीरा दीप आगरी नाम पिया सूँ रसी॥

खांड़ धार भक्ती की न्यारी काटि है जम फँसी।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर सब्द सरोवर धसी॥

(८)

राग कल्याण

मेरो मन राम हि राम रटै रे॥ टेक॥
राम नाम जप लीजे प्राणी, कोटिक पाप कटै रे।
जनम जनम के खत जु पुराने, नामहि लेत फटे रे॥
कनक कटोरे इम्रत भरियो, पीवत कौन नटे रे।
मीरा कहे प्रभु हरि अविनासी, तन मन ताहि पटे रे॥

(९)

पायो जी मैंने राम रतन धन पायो॥ टेक॥
वस्तु अमोलक दी मेरे सतगुर, किरपा कर अपनायो।
जनम जनम की पूँजी पाई, जग में सभी खोवायो॥
खरचै नहिं कोइ चोर न लेवे, दिन दिन वढ़त सवायो।
सत की नाव खेवटिया सतगुर, भवसागर तर आयो॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, हरख हरख जस गायो॥

(१०)

राग रागश्री

राम नाम रस पीजे मनुआं, राम नाम रस पीजे॥ टेक॥
तज कुसंग सतसंग बैठ नित, हरि चरचा सुण लीजे॥
काम क्रोध मद लोभ मोह कूँ, चित से वहाय दीजे॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, ताहि के रँग में भींजे॥

(११)

हरि सों विनती करौं कर जोरी ॥ टेक ॥
वरवस रचल धमारी, हम घर मातु पिता पारें गारी ॥
निपट अलप वुधि दीन गति थोरी, प्रेम नगरन रस ले
वरजोरी ॥
मीरा के प्रभु सरण तिहारी, अवचक आय मिलहु
गिरधारी ॥

(१२)

राग दरवारी

तुम सुनो दयाल म्हांरी अरजी ॥ टेक ॥
भौसागर में वही जात हूँ, काढ़ो तो थांरी मरजी ॥
यो संसार सगो नहिं कोई, सांचा सगा रघुवरजी ॥
मात पिता और कुटँव कवीलो, सव मतलव के गरजी ॥
मीरा को प्रभु अरजी सुन लो, चरन लगाओ थांरी मरजी ॥

(१३)

राग रामकली

अव तो निभायाँ वनेगा, वाँह गहे की लाज ॥ टेक ॥
समरथ सरण तुम्हारी साँइयाँ, सरव सुधारण-काज ॥
भवसागर संसार अपरवल, जा में तुम हो जहाज ॥
निरधाराँ आधार जगत-गुर, तुम विन होय अकाज ॥
जुग जुग भीर करी भक्तन की, दीन्ही मोच्छ समाज ॥
मीरा सरण गही चरणन की, पेज रखो महराज ॥

(१४)

होजी म्हाराज छोड़ मत जाज्यो ॥ टेक ॥
मैं अबला बल नाहिं गुसाईं, तुमहिं मेरे सिरताज ॥
मैं गुणहीन गुण नाहिं गुसाईं. तुम समरथ महराज ॥
रावली होइ ये किन रे जाऊँ, तुम हौ हिवड़ा रो साज ॥
मीरा के प्रभु और न कोई, राखो अब के लाज ॥

(१५)

म्हाँरी सुध ज्यूँ जानो ज्यूँ लीजो जी ॥ टेक ॥
पल पल भीतर पंथ निहारूँ,
दरसण म्हाँने दीजो जी ॥
मैं तो हूँ बहु औगणहारी,
औगण चित मत दीजो जी ॥
मैं तो दासी थाँरे चरण जनाँ की,
मिल बिछुरन मत कीजो जी ॥
मीरा तो सतगुरु जी सरणे,
हरि चरणाँ चित दीजो जी ॥

(१६)

राग बिलावल

पिया म्हाँरे नैणा आगे रहज्यो जी ॥ टेक ॥
नैणा आगे रहज्यो, म्हाँने भूल मत जाज्यो जी ॥
भौसागर में बही जात हूँ, वेग म्हारी सुध लीज्यो जी ॥

राणाजी भेजा विषका प्याला, सो अमृत कर दीज्यो जी ॥
मीराके प्रभु गिरधर नागर, मिल बिछुरन मत कीज्यो जी ॥

(१७)

म्हारे नैणा आगे रहीजो जी, स्याम गोविन्द ॥ टेक ॥
दास कबीर घर बालद जो लाया, नामदेवका छान छवंद ॥
दास धना को खेत निपजायो, गज की टेर सुनंद ॥
भीलणी का बेर सुदामा का तुन्दुल, भर मूठड़ी बुकंद ॥
करमा बाई को खींच अरोग्यो, होइ परसण पावंद ॥
सहस गोप बिच स्याम बिराजे, ज्यों तारा बिच चंद ॥
सब संतों का काज सुधारा, मीरा सूँ दूर रहंद ॥

(१८) (१)

राग देवगन्धार

बसो मेरे नैननमें नन्दलाल ॥ टेक ॥
मोहनी मूरति साँवरि सूरति, बने नैन बिसाल ॥
अधर सुधा रस मुरली राजित, उर वैजंती माल ॥ ३८२८
छुद्र घंटिका कटि तटि सोभित, नूपुर सब्द रसाल ॥
मीरा प्रभु संतन सुखदाई, भक्त-बछल गोपाल ॥

(१९)

राग श्यामकल्याण

हरि तुम हरो जन की भीर ॥ टेक॥
द्रोपदी को लाज राख्यो तुम बढ़ायो चीर ॥
भक्त कारन रूप नरहरि धर्यो आप सरीर ॥

हरिनकस्यप मार लीन्हो धर्‍यो नाहिन धीर ॥
बूड़ते गजराज राख्यो कियो बाहर नीर ॥
दास मीरा लाल गिरधर दुख जहाँ तहँ पीर ॥

(२०)

मीरा को प्रभु साची दासी बनाओ।
झूठे धंधों से मेरा फंदा छुड़ाओ ॥ टेक ॥
लूटे ही लेत बिवेक का डेरा।
बुधि बल यदपि करूँ बहुतेरा ॥
हाय राम नहिं कछु बस मेरा।
मरत हूँ बिबस प्रभु धाओ सवेरा ॥
धर्म उपदेस नित प्रति सुनती हूँ।
मन कुचाल से भी डरती हूँ ॥
सदा साधु सेवा करती हूँ।
सुमिरण ध्यान में चित धरती हूँ ॥
भक्ति मार्ग दासी को दिखाओ।
मीरा को प्रभु साँची दासी बनाओ ॥

(२१)

अब मैं सरण तिहारी जी, मोहिं राखो कृपानिधान ॥ टेक ॥
अजामील अपराधी तारे, तारे नीच सदान।
जल डूबत गजराज उबारे, गणिका चढ़ी बिमान ॥
और अधम तारे बहुतेरे, भाखत संत सुजान।

कुवजा नीच भीलनी तारी, जानै सकल जहान ॥
कहँ लगि कहूं गिनत नहिं आवै, थकि रहे वेद पुरान ।
मीरा कहै मैं सरण रावली, सुनियो दोनों कान ॥

(२२)

सुन लीजे विनती मोरी, मैं सरन गही प्रभु तोरी ॥ टेक ॥
तुम तो पतित अनेक उधारे, भवसागर से तार्‌यो ॥
मैं सब का तो नाम न जानों, कोई कोई भक्त वखानों ॥
अम्बरीक सुदामा नामी, पहुंचाये निज धामा ॥
ध्रुव जो पांच वरस को बालक, दरस दियो घनस्यामा ॥
धना भक्त का खेत जमाया, कबिरा बैल चराया ॥
सेवरी के जूठे फल खाये, काज किये मन भायें ॥
सदना औ सेना नाई को, तुम लीन्हा अपनाई ॥
कर्म्मा की खिचड़ी तुम खाई, गनिका पार लगाई ॥
मीरा प्रभु तुम्हरे रँग राती, जानत सब दुनियाई ॥

(२३)

राग पहाड़ी

मेरा बेड़ा लगाय दीजो पार, प्रभु जी अरज करूँ छूँ ॥टेक॥
या भव में मैं वहु दुख पायो, संसा सोग निवार ॥
अष्ट करम की तलब लगी है, दूर करो दुख पार ॥
यो संसार सब वह्यो जात है लख चौरासी धार ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, आवागमन निवार ॥

(२४)

स्वामी सब संसार के हो, साँचे श्रीभगवान ॥ टेक ॥
स्थावर जंगम पावक पाणी, धरती बीच समान।
सब में महिमा तेरी देखी, कुदरत के कुरबान॥
सूदामा के दारिद खोये, बारे की पहिचान।
दो मुट्ठी तंदुल की चाबी, दीन्हो द्रव्य महान॥
भारत में अर्जुन के आगे, आप भये रथवान।
उनने अपने कुल को देखा, छुट गये तीर कमान॥
ना कोइ मारे ना कोइ मरता, तेरा यह अज्ञान।
चेतन जीव तो अजर-अमर है, यह गीता को ज्ञान॥
मुझ पर तो प्रभु किरपा कीजे, बंदी अपनी जान।
मीरा गिरधर सरण तिहारी, लगै चरणं में ध्यान॥

(२५)

अच्छे मीठे चाख चाख बोर लाई भीलणी॥ टेक॥
ऐसी कहा अचारवती, रूप नहीं एक रती।
नीच कुल ओछी जात, अति ही कुचीलणी॥
झूठे फल लीन्हें राम, प्रेम की प्रतीत जाण।
ऊँच नीच जाने नहीं, रस की रसीलणी॥
ऐसी कहा वेद पढ़ी, छिन में विमाण चढ़ी।
हरिजी सूँ बाध्यो हेत, वैकुँठ में झूलणी॥
ऐसी प्रीत करे सोई, दास मीरा तरै जोइ।
पतित-पावन प्रभु, गोकुल अहीरणी॥

(२६)

राग विहाग

करम गति टारे नाहिं टरे ॥ टेक ॥
सतवादी हरिचँद से राजा, सो तो नीच घर नीर भरे ॥
पांच पांडु गुरू कुंती द्रोपती, हाड़ हिमालय गरे।
जज्ञ किया बलि लेण इन्द्रासन, सो पाताल धरे ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, विप से अमृत करे ॥

(२७)

जग में जीवणा थोड़ा, राम कुण कह रे जंजार ॥ टेक ॥
मात पिता तो जन्म दियो है, करम दियो करतार ॥
कइ रे खाइयो कइ रे खरचियो, कइ रे कियो उपकार ॥
दिया लिया तेरे संग चलेगा, और नहीं तेरी लार ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, भज उतरो भवपार ॥

(२८)

यही विधि भक्ति कैसे होय।
मन की मैल हिय तें न छूटी, दियो तिलक सिर धोय ॥
काम कूकर लोभ डोरी, बाँधि मोहिं चंडाल।
क्रोध कसाई रहत घट में, कैसे मिलै गोपाल ॥
विलार विपया लालची रे, ताहि भोजन देत।
दीन हीन ह्वै छुधा रत से, राम नाम न लेत ॥
आपहि आप पुजाय के रे, फूले अंग न समात।

अभिमान टीला किये बहु, कहु जल कहाँ ठहरात ॥
जो तेरे हिये अंतर की जानै, ता सों कपट न बनै ।
हिरदे हरि को नाम न आवै, मुख तें मनिया गनै ॥
हरी हितु से हेत कर, संसार आसा त्याग ।
दास मीरा लाल गिरधर, सहज कर बैराग ॥

(२९)

राग विलावल

लेताँ लेताँ राम नाम रे, लोकड़ियाँ तो लाजे मरे छे ॥ टेक ॥
हरि मंदिर जाताँ पावलिया रे दूखे, फिरि आवे सारो गाम रे ॥
झगड़ो थाय त्याँ दौड़ी ने जाय रे, मुकिने घर ना काम रे ॥
भाँड भवैया गनिका नृत्य करताँ, वेसी रहे चारे जाम रे ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, चरण कमल चित हाम रे ॥

(३०)

रावलो बिड़द मोहिं रूढ़ो लागे, पीड़ित पराये प्राण ॥
सगो सनेही मेरो और न कोई, बैरी सकल जहान ॥
ग्राह गह्यो गजराज उबार्यो, बूड़ न दियो छे जान ॥
मीरा दासी अरज करत है, नहिं जो सहारो आन ॥

(३१)

कमल-दल लोचना तैंने कैसे नाथ्यो भुजंग ॥ टेक ॥
पैसि पियाल काली नाग नाथ्यो, फण फण निर्त करंत ॥
कूद पर्यो न डर्यौ जल माही, और काहू नहिं संक ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, श्री वृन्दावन चंद ॥

विरह और प्रेम

(३२)

जब से मोहिं नंदनँदन दृष्टि पड़्यो माई ॥
तब से परलोक लोक कछू ना सोहाई ॥
मोरन की चंद्र कला सीस मुकुट सोहै ।
केसर को तिलक भाल तीन लोक मोहै ॥
कुंडल की अलक झलक कपोलन पर छाई ।
मनो मीन सरवर तजि मकर मिलन आई ॥
कुटिल भृकुटि तिलक भाल चितवन में टौना ।
खंजन अरु मधुप मीन भूले मृग छौना ॥
सुंदर अति नासिका सुग्रीव तीन रेखा ।
नटवर प्रभु भेष धरे रूप अति विसेषा ॥
अधर बिंब अरुन नैन मधुर मंद हाँसी ।
दसन दमक दाड़िम दुति चमके चपला सी ॥
क्षुद्र घंट किंकिनी अनूप धुनि सोहाई ।
गिरधर अंग अंग मीरा वलि जाई ॥

(३३)

मेरो मन वसि गो गिरधर लाल सों ॥ टेक ॥
मोर मुकुट पीताम्बरो गल वैजन्ती माल ।
गउवन के संग डोलत हो जसुमति को लाल ॥

कालिंदी के तीर हो कान्हा गउवाँ चराय।
सीतल कदम की छाहियाँ हो मुरली बजाय॥
जसुमति के दुवरवाँ ग्वालिन सब जाय।
बरजहु आपन दुलरुवा हम सों अरुझाय॥
बृन्दाबन क्रीड़ा करै गोपिन के साथ।
सुर नर मुनि सब मोहे हो ठाकुर जदुनाथ॥
इन्द्र कोप घन बरखो मूसल जल धार।
बूड़त बृज को राखेऊ मोरे प्रान-अधार॥
मीरा के प्रभु गिरधर हो सुनिये चित लाय।
तुम्हरे दरस की भूखी हो मोहिं कछु न सोहाय॥

(३४)

हे री मैं तो प्रेम दिवानी, मेरा दरद न जाणे कोय ॥टेक॥
सूली ऊपर सेज हमारी, किस बिध सोणा होय।
गगन मँडल पै सेज पिया की, किस विध मिलणा होय॥
घायल की गत घायल जानै, की जिन लाई होय।
जौहरी की गत जौहरी जानै, कि जिन जौहर होय॥
दरद की मारी बन बन डोलूं, वैद मिल्या नहिं कोय।
मीरा की प्रभु पीर मिटैगी, जब वैद संवलिया होय॥

राग भैरवी

(३५)

मैं हरि बिन क्यों जिऊं री माय॥ टेक॥
पिय कारन बौरी भई जस काठहि घुन खाय।

औपध मूल न संचरे, मोहिं लागो बौराय ॥
कमठ दादुर बसत जल महँ, जलहि तें उपजाय ।
मीन जल के बीछुरे तन, तलफि के मरि जाय ॥
पिह ढूँढ़न वन वन गई, कहुं मुरली धुनि पाय ।
मीरा के प्रभु लाल गिरधर, मिलि गये सुखदाय ॥

(३६)

म्हाँने चाकर राखो जी, गिरधारी लला चाकर राखो जी ॥ टेक॥
चाकर रहसूँ बाग लगासूँ, नित उठ दरसन पासूँ ।
वृन्दावन की कुंज गलीन में, गोविंद लीला गासूँ ॥
चाकरी में दरसन पाऊँ, सुमिरन पाऊँ खरची ।
भाव भगति जागीरी पाऊँ, तीनो बातां सरसी ॥
मोर मुकट पिताम्बर सोहे, गल बैजंती माला ।
वृन्दावन में धेनु चरावे, मोहन मुरली वाला ॥
ऊँचे ऊँचे महल बनाऊँ, बिच बिच राखूँ बारी ।
साँवरिया के दरसन पाऊँ, पहिर कुसुम्मी सारी ॥
जोगी आया जोग करन कूँ, तप करने सन्यासी ।
हरी भजन कूँ साधू आये, वृन्दावन के वासी ॥
मीरा के प्रभु गहिर गँभीरा, हृदे रहो जो धीरा ।
आधी रात प्रभु दरसन दीन्हो, जमुनाजी के तीरा ॥

(३७)

राग प्रभाती

जागो बंसीवारे ललना, जागो मोरे प्यारे ॥ टेक ॥

(३७)

रजनी बीती भोर भयो है, घर घर खुले किंवारे।
गोपी दही मथत सुनियत है, कँगना के झनकारे।
उठो लाल जी भोर भयो है, सुर नर ठाढ़े द्वारे।
ग्वाल बाल सब करत कुलाहल, जय जय सबद उचारे।
माखन रोटी हाथ् में लीनी, गउवन के रखवारे।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, सरण आयाँ कूँ तारे॥

(३८)

राग पीलू

करणाँ सुणि स्याम मेरी,
मैं तो होइ रही चेरी तेरी॥ टेक॥
दरसण कारण भई बावरी, विरह विथा तन घेरी।
तेरे कारण जोगण हूँगी, दूँगी नग्र विच फेरी॥
कुंज सब हेरी फेरी।
अंग भभूत गले म्रिघ छाला, यो तन भसम करूँ री।
अजहुँ न मिल्या राम अविनासी, वन वन वीच फिरूँ री॥
रोऊँ नित टेरी टेरी।
जन मीरा कूँ गिरधर मिलिया, दुख मेटण सुख भेरी।
रूम रूम साता भइ उर में, मिटि गई फेरा फेरी।

(३९)

राग कनड़ा

तनक हरि चितवों जी मोरी ओर ॥ टेक ॥

हम चितवत तुम चितवत नाहीं, दिलके बड़े कठोर ।

मेरे आसा चितवनि तुमरी, और न दूजी दोर ।

तुमसे हमकूं कबर मिलोगे, हम सी लाख करोर ।

ऊभी ठाढ़ी अरज करत हूं, अरज करत भयो भोर ।

मीरा के प्रभु हरि अविनासी, दयूं प्राण अकोर ।

(४०)

तुम जीमो गिरधर लाल जी ।

मीरा दासी अरज करे छे सुनिए परम दयाल जी ॥

छप्पन भोग छतीसो विंजन, पावो जन प्रतिपाल जी ॥

राज भोग आरोगो गिरधर, सनमुख राखो थाल जी ॥

मीरा दासी चरण उपासी, कीजे वेग निहाल जी ॥

(४१)

रघुनन्दन आगे नाचूंगी ॥ टेक ॥

नाच नाच रघुनाथ रिझाऊं, प्रेमी जन को जाचूँगी ॥

प्रेम प्रीत का बांध घूंघरा, सुरत की कछनी काछूँगी ॥

लोक लाज कुल की मरजादा, या में एक न राखूंगी ॥

पिया के पलँगा जा पोढूंगी, मीरा हरि रंग राचूँगी ॥

(४२)

सखी री मैं तो गिरधर के रंग राती ।। टेक ।।
पचरँग मेरा चोला रँगा दे, मैं झुरमट खेलन जाती ।
झुरमट में मेरा साँई मिलेगा, खोल अडम्बर गाती ॥
चांद जायगा सुरज जायगा, जायगा धरण अकासी ।
पवन पाणी दोनों ही जायँगे, अटल रहे अबिनासी ॥
सुरत निरत का दिवला सँजो ले, मनसा की कर बाती ।
प्रेम हटी का तेल बना ले, जगा करे दिन राती ॥
जिनके पिया परदेस बसत है, लिखि लिखि भेजें पाती ।
मेरे पिय मो माहिं बसत हैं, कहूँ न आती जाती ॥
पीहर बसूँ न बसूँ सास घर सतगुरु सब्द सँगाती ।
ना घर मेरा ना घर तेरा, मीरा हरि रंग राती ॥

(४३)

रमैया मैं तो थांरे रंग राती ॥ टेक ॥
औराँ के पिय परदेस बसत हैं, लिख लिख भेजें पाती ।
मेरा पिया मेरेरिदे बसत है गूंज करूँ दिन राती ॥
चूवा चोला पहिर सखी री, मैं झुरमट रमवा जाती ।
झुरमट में मोहिं मोहन मिलिया खोल मिलूँ गल बाटी ॥
और सखी मद पी पी माती, मैं विन पियां मद माती ।
प्रेम भठी को मैं मद पीयो, छकी फिरूँ दिन राती ॥

सुरत निरत का दिवला सँजोया, मनसा पूरन वाती।
अगम घाणि का तेल सिंचाया, वाल रही दिन राती ॥
जाऊँ नी पीहरिये जाऊँ नी सासुरिये, सतगुर सैन लगाती।
दासी मीरा के प्रभु गिरधर, हरि चरनां की मैं दासी ॥

(४४)

मैं अपने सैंयां संग सांची।
अब काहे की लाज सजनी, प्रगट ह्वै नाची ॥
दिवस भूख न चैन कबहिन नींद निसु नासी।
वेध वार को पार ह्वैगो, ज्ञान गुह गांसी ॥
कुल कुटुम्ब सब आनि बैठे, जैसे मधु मासी।
दास मीरा लाल गिरधर, मिटी जग हांसी ॥

(४५)

कोई कछू कहे मन लागा ॥ टेक ॥
ऐसी प्रीत लगी मनमोहन, ज्यूँ सोने में सुहागा ॥
जनम जनम का सोया मनुवां, सतगुर सब्द सुण जागा ॥
माता पिता सुत कुटम कबीला, टूट गया ज्यूँ तागा ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, भाग हमारा जागा ॥

(४६)

राग मांड

माई मैं तो लियो गोविंदो मोल ॥ टेक ॥
कोइ कहे छानी कोइ कहे चोरी, लियो है बजंता ढोल ॥

कोइ कहे कारो कोइ कहे गोरो, लियो है मैं आँखी खोल ॥
कोइ कहे हलका कोइ कहे भारो, लियो है तराजू तोल ॥
तन का गहना मैं सब कुछ दीन्हा, दियो है बाजूबंद खोल ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर पुरब जनम का है कौल ॥

(४७)

पिया तेरें नाम लुभाणी हो।
नाम लेत तिरता सुण्या जैसे पाहण पाणी हो ॥ टेक ॥
सुकिरत कोई ना कियो, बहु करम कुमाणी हो।
गणिका कीर पढ़ावताँ, बैकुंठ बसाणी हो ॥
अरध नाम कुंजर लियो, वा की अवध घटानी हो।
गरुण छांड़ि हरि धाइया, पसु जूण मिटाणी हो ॥
अजामेल से ऊधरे, जम त्रास नसानी हो।
पुत्र हेतु पदवी दई, जग सारे जाणी हो ॥
नाम महातम गुरु दियो, परतीत पिछाणी हो।
मीरा दासी रावली, अपणी कर जाणी हो ॥

(४८)

राग खंभावती

राम नाम मोरे मन बसियो, रसियो राम रिझाऊँ ए माय।
मैं मँद भागिण करम अभागिण, कीरत कैसे गाऊँ ए माय ॥
विरहपिंजर की बाड़ सखी री, उठकर जी हुलसाऊँ ए माय।

मन कूं मार सजूं सतगुरु सूं, दुरमत दूर गमाऊँ ए माय ॥
डाको नाम सुरत की डोरी, कड्यां प्रेम चढ़ाऊँ ए माय ।
ज्ञान को ढोल बन्यो अति भारी, मगन होय गुण
गाऊँ ए माय ॥
तन करूं ताल मन करूं मोरचंग, सोती सुरत जगाऊँ ए माय ।
निरत करूं मैं प्रीतम आगे, तो अमरापुर पाऊँ ए माय ॥
मो अबलापर किरपा कीज्यो, गुण गोविंदके गाऊं ए माय ।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, रज चरणां की पाऊँ ए माय ॥

(४९)

हेली सुरत सोहागिन नार, सुरत मोरी राम से लगी ॥ टेक ॥
लगनी लहंगा पहिर सोहागिन, बीती जाय बहार ।
धन जोबन दिन चार का है, जात न लागी बार ॥
भूठे बर को क्या बरूं जी, अधबिच में तज जाय ।
बर बरांला राम जी, म्हारो चूड़ो अमर हो जाय ॥
राम नाम का चूड़लो हो, निरगुन सुरमो सार ।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर हरि चरणां की मैं दास ॥

(५०)

बड़े घर ताली लागी रे, म्हारा मन री उणारथ
भागी रे ॥ टेक ॥
छीलरिये म्हाँरो चित नहीं रे, डाबरिये कुण जाव ।

गंगा जमुना सूँ काम नहीं रे मैं तो जाय मिलूँ दरियाव ॥
हाल्याँ मोल्याँ सूँ काम नहीं रे, सीख नहीं सरदार।
कामदाराँ सूँ काम नहीं रे, मैं तो जाव करूँ दरबार ॥
काच कथीर सूँ काम नहीं रे, लोहा चढ़े सिर भार।
सोना रूपा सूँ काम नहीं रे, म्हाँरे हीराँ री वोपार ॥
भाग हमारो जागियो रे, भयो समँद सूँ सीर।
अमृत प्याला छाँड़ि कै, कुण पीवै कड़वो, नीर ॥
पीपा कूँ प्रभु परच्यौ दीन्हो, दिया रे खजाना पूर।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, धणी मिल्या छै हुजूर ॥

(५१)

॥ चौपाई ॥

ज्यूँ अमली के अमल अधारा। यूँ रामैया प्रान हमारा ॥
कोइ निन्दै वन्दै दुख पावै। मोकूँ तो रामैयो भावै ॥

॥ पद ॥

सीसोद्यो रूठ्यो तो म्हाँरो काँई करलेसी।
मैं तो गुण गोविंद का गास्याँ हो माई ॥
राणो जी रूठ्याँ वाँरो देस रखासी।
हरि रूठ्याँ कुम्हलास्याँ हो माई ॥
लोक लाज की काण नमानूँ।
निरभै निसाण घुरास्याँ हो माई ॥

राम नाम की झाझ चलास्यां।
भवसागर तर जास्यां हो माई॥
मीरा सरन सबल गिरधर की।
चरण कंवल लपटास्यां हो माई॥

(५२)

राग हंस नारायण

आली सांवरो कि दृष्टि मानो प्रेम की कटारी है॥ टेक॥
लागत बेहाल भई तन की सुधि बुद्धि गई,
तन मन व्यापो प्रेम मानो मतवारी है॥
सखियां मिलि दुइ चारी बावरी सी भई न्यारी,
हौं तो वा को नीके जानों कुंज को विहारी है॥
चंद को चकोर चाहै दीपक पतंग दहै,
जल बिना मीन जैसे तैसे प्रीत प्यारी है॥
विनती करों हे स्याम लागों मैं तुम्हारे पाम,
मीरा प्रभु ऐसे जानो दासी तुम्हारी है॥

(५३)

मैं तो म्हारा रमैयाने देखवो करूँ री॥ टेक॥
तेरो ही उमरण तेरो ही सुमरण तेरो ही ध्यान धरूँ री॥
जहां जहां पांव धरूँ धरणी पर, तसां तहां निरत करूँ री॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, चरणां लिपट परूँ री॥

(५४)

मेरे परम सनेही राम की नित ओलूँड़ी आवे ॥ टेक ॥
राम हमारे हम हैं राम के, हरि विन कुछ न सुहावै ॥
आवण कह गये अजहुँ न आये, जिवड़ो अति उकलावै ॥
तुम दरसण की आस रमइया, निस दिन चितवत जावै ॥
चरण कँवल की लगन लगी अति, विन दरसण दुख पावै ॥
मीरा कूँ प्रभु दरसण दीन्हा, आनँद वरण्यो न जावै ॥

(५५)

पिया मोहिं आरत तेरी हो।
आरत तेरे नाम की, मोहिं साँझ सवेरी हो ॥
या तन को दिवला करूँ, मनसा की वाती हो।
तेल जलाऊँ प्रेम को, वालूँ दिन राती हो ॥
पटियाँ पारूँ गुरुज्ञान की, बुधि माँग सँवारूँ हो।
पीया तेरे कारणे, धन जोवन गारूँ हो ॥
सेजड़िया वहु रंगिया, चंगा फूल विछाया हो।
रैण गई तारा गिणत. प्रभु अजहुँ न आया हो ॥
आया सावन भादवा, वर्षा ऋतु छाई हो।
स्याम पधार्‌या सेज में, सूती सैन जगाई हो ॥
तुम हो पूरे साइयाँ, पूरा सुख दीजे हो।
मीरा व्याकुल विरहणी, अपणी कर लीजे हो ॥

(५६)

कैसे जिऊं री माई हरि विन कैसे जिऊँ री ॥ टेक ॥
उदक दादुर पीनवत है, जल से ही उपजाई।
पल एक जल कूं मीन विसरें, तलफत मर जाई ॥
पिया विना पीली भई रे (वाला), ज्यों काठ घुन खाई।
औषध मूल न संचरै रे (वाला), वैद फिर जाई ॥
उदासी होय वन वन फिरूं रे, विथा तन छाई।
दास मीरा लाल गिरधर, मिल्या है सुखदाई ॥

(५७)

साजन घर आवो मीठा वोला ॥ टेक ॥
कवकी खड़ी खड़ी पंथ निहारूं, थांहीं आया होसी भला ॥
आंवो निसंक संक मत मानो, आयांही सुख रहला ॥
तन मन वार करूं न्योछावर, दीजो स्याम मोहेला ॥
आतुर वहुत विलम नहि करणा, आयांही रँग रहेला ॥
तेरे कारन सव रँग त्यागा, काजल तिलक तमोला ॥
तुम देख्यां विन कल न परत है, कर धर रही कपोला ॥
मीरा दासी जनम जनम की, दिल की घुंडी खोला ॥

(५८)

राग जैजैवंती

सोवतही पलका में मैं तो, पलक लगी पलमें पिउ आये ॥
मैं जु उठी प्रभु आदर देन कूँ, जाग परी पिव ढूँढ़ न पाये ॥

और सखी पिउ सूत गमाये, मैं जु सखी पिउ जागि गमाये ॥
आज की वात कहा कहूँ सजनी, सुपना में हरि लेत बुलाये ॥
वस्तु एक जब प्रेम की पकरी, आज भये सखि मन के भाये ॥
वो माहरो सुने अरु गुनि है, बाजे अधिक बजाये ॥
मीरा कहे सत्त कर मानो, भक्ति मुक्ति फल पाये ॥

(५९)

बंशीवारो आयो म्हाँरे देस, थाँरी साँवरी सुरत वाली वैस ॥टेक॥
आऊँ जाऊँ कर गया साँवरा, कर गया कौल अनेक ।
गिणते गिणते घिस गईं उँगली, घिस गइ उँगलीकी रेख ॥
मैं बैरागिण आदि की, थाँरे म्हाँरे कद को सनेस ।
बिन पाणी बिन साबुन साँवरा, हुइ गई धुई सपेद ॥
जोगिण हुइ जंगल सब हेरूँ, तेरा न पाया भेस ।
तेरी सुरत के कारणे, धर लिया भगवा भेस ॥
मोर मुकुट पीताम्बर सोहै, घूँघर वाला केस ।
मीरा को प्रभु गिरधर मिल गये, दूणा बढ़ा सनेस ॥

(६०)

राग कान्हरा

आये आये जो म्हाँरे म्हाराज आये, निज भक्तनके काज बनाये ॥
तज बैकुण्ठ तज्यो गरुड़ासन, पावन वेग उठ धाये ॥
जब ही दृष्टि परे नँद नन्दन, प्रेम भक्ति रस प्याये ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, चरण कमल चित लाये ॥

(६१)

ऐसे पिया जान न दीजे हो ॥ टेक ॥
चलो री सखी मिलि राखि के, नैंना रस पीजे हो ॥
स्याम सलोनो सांवरो, मुख देखे जीजे हो ॥
जोइ-जोइ भेप सों हरि मिलैं, सोइ-सोइ भल कीजे हो ॥
मीरा के गिरधर प्रभू, वड़ भागन रीझै हो ॥

(६२)

छांड़ो लँगर मोरी वहियाँ गहो ना ॥ टेक ॥
मैं तो नार पराये घर की, मेरे भरोसे गुपाल रहो ना ॥
जो तुम मेरी वहियाँ गहत हो, नयन जोर मेरे प्राण हरो ना ॥
वृन्दावन की कुञ्ज गली में, रीत छोड़ अनरीत करो ना ॥
मीराके प्रभु गिरधर नागर, चरण कमल चित टारे टरो ना ॥

(६३)

आवत मोरी गलियन में गिरधारी, मैं तो छुप गई
लाज की मारी ॥ टेक ॥
कुसुमल पाग के केसरिया जामा, ऊपर फूल हजारी।
मुकट ऊपरे छत्र विराजे, कुण्डल की छवि न्यारी ॥
केसरी चीर दरयाई को लेंगो, ऊपर अंगिया भारी।
आवते देखी किसन मुरारी, छुप गई राधा प्यारी ॥
मोर मुकट मनोहर सोहे, नथनी की छवि न्यारी।
गल मोतिनकी माल विराजे; चरण कमल वलिहारी ॥

ऊभी राधा प्यारी अरज करत है, सुणजे किसन मुरारी।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, चरण कमल पर वारी ॥

(६४)

राग सुख सोरठ

देखो सइयाँ हरि मन काठ कियो ॥ टेक ॥
आवन कहि गयो अजहुँ न आयो, करि करि वचन गयो ॥
खान पान सुध बुध सब बिसरो कैसे करि मैं जियों ॥
बचन तुम्हारे तुमहिं बिसारे, मन मेरो हर लियो ॥
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर, तुम बिन फटत हियो ॥

(६५)

राग मलार

डारि गयो मनमोहन पाँसी ॥ टेक ॥
आँबाकी डालि कोइल इक बोलै, मेरो मरण अरु जग केरी हांसी।
बिरह की मारी मैं बन डोलूँ, प्रान तजूँ करवत ल्यूँ कासी।
मीरा के प्रभु हरि अविनासी, तुम मेरे ठाकुर मैं तेरी दासी।

(६६)

राग दुर्गा

हो गये स्याम दूइज के चंदा॥ टेक ॥
मधुवन जाइ भये मधुवनिया हम पर डारो प्रेम को फंदा।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, अब तो नेह परो कछु मंदा ॥

(६७)

अरज करे छे मीरा राकड़ी,
ऊभी ऊभी अरज करे छे ॥
मणि-धर स्वामी म्हांरे मंदिर पधारो,
सेवा करूं दिन रातड़ी ॥
फुलना रे तोड़ा ने फुलना रे गजरा,
फुलना रे हार फुल पांखड़ी ॥
फुलना रे गादी ने फुलना रे तकिया,
फूलना रे याथरी पछेड़ी ॥
पय पकवान मिठाई ने मेवा,
सेवैयां ने सुन्दर दहींड़ी ॥
लवंग सुपारी ने एलची,
तज वाला काथा चुना री पान बीड़ी ॥
सेज बिछाऊँ ने पासा मँगाऊँ,
रमवा आवो तो जाय रातड़ी ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर,
(वाला) तम ने जोतां ठरे आंखड़ी ॥

(६८)

तुम पलक उघाड़ो दीनानाथ, हूँ हाजिर नाजिर
कब की खड़ी ॥ टेक ॥

साऊ थे दुसमण होइ लागे, सबने लगूँ कड़ी।
तुम विन साऊ कोऊ नहीं है, डिगी नाव मेरी
समँद अड़ी ॥
दिन नहीं चैन रात नहिं निद्रा, सूखूँ खड़ी खड़ी।
बान बिरह के लगे हिये में, भूलूँ न एक घड़ी ॥
पत्थर की तो अहिल्या तारी, बन के बीच पड़ी।
कहा बोझ मीरा में कहिये, सौ ऊपर एक धड़ी ॥
गुरु रैदास मिले मोहिं पूरे, धुर से कमल भिड़ी।
सतगुरु सैन दई जब आ के, जोत में जोत रली ॥

(६९)

माई म्हाँरी हरि न बूझी बात।
पिंड में से प्राण पापी, निकस क्यूँ नहिं जात ॥
रैण अँधेरी बिरह घेरी, तारा गिणत निस जात।
ले काटारी कंठ चीरूँ, करूँगी अपघात ॥
पाट न खोल्या मुखाँ न बोल्या, साँझ लग परभात।
अबोलना में अवध बीती, काहे की कुसलात ॥
सुपनमें हरि दरस दीन्हौं, मैं न जाण्यो हरि जात।
नैन म्हाँरा उघड़ि आया, रही मन पछतात ॥
आवण आवण होय रह्यो रे, नहिं आवण की बात।
मीरा व्याकुल बिरहनी रे, बाल ज्यों बिल्लात ॥

(७०)

राग दरबारी

प्रभु जी थें कहां गयो नेहड़ी लगाय ॥ टेक ॥
छोड़ गया बिस्वास संगाती, प्रेमकी बाती बराय ॥
बिरह समँदमें छोड़ गया छो, नेह की नाव चलाय ॥
मीरा कहे प्रभु कब रे मिलोगे, तुम बिन रह्यो न जाय ॥

(७१)

राग प्रभाती

राम मिलण रो घणो उमावो नित उठ जोऊं बाटड़ियाँ ॥टेक॥
दरसण बिन मोहिं पल न सुहावै, कल न पड़त है
आँखड़ियाँ ॥
तलफ तलफ के बहु दिन बीते, पड़ी बिरह की फांसड़ियाँ ।
अब तो बेग दया कर साहिब, मैं हूं तेरी दासड़ियाँ ॥
नैण दुखी दरसण को तरसे, नाभि न बैठे साँसड़ियाँ ।
रात दिवस यह आरत मेरे, कब हरि राखे पासड़ियाँ ॥
लगी लगन छूटण को नाहीं, अब क्यूँ कीजे आँटड़ियाँ ।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, पूरो मन की आसड़ियाँ ॥

(७२)

गोविंद कबहूँ मिले पिया मेरा ॥ टेक ॥
चरन कमल को हँस करि देखों, राखों नैनन नेरा ॥

निरखन की मोहिं चाव घनेरी, कब देखों मुख तेरा ॥
व्याकुल प्राण धरत नहिं धीरज मिल तूँ मीत सबेरा।
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर, ताप तपन बहुतेरा ॥

(७३)

राग मांड

नातो नाम को मोसूँ तनक न तोड़्यो जाय ॥ टेक ॥
पानाँ ज्यूँ पीली पड़ी रे, लोग कहे पिंड रोग।
छाने लाँघन मैं किया रे, राम मिलण के जोग ॥
बाबल वैद बुलाइया रे, पकड़ दिखाई म्हाँरी बाँह।
मूरख वैद मरम नहि जाणे, करक कलेजे माँह ॥
जाओ वैद घर आपणे रे, म्हाँरो नाँव न लेय।
मैं तो दाधी विरह की रे, काहे कूँ औषद देय ॥
माँस गलि गलि छीजिया रे, करक रह्या गल आहि।
आँगुलियाँ की मूँदड़ी, म्हारे आवण लागी बाँहि ॥
रहु रहु पापी पपिहरा रे, पिव को नाम न लेय।
जे कोइ विरहन साम्हले तो पिव कारण जिव देय ॥
खिण मन्दिर खिण आँगणे रे, खिण खिण ठाढ़ी होय।
घायल ज्यूँ घूमूँ खड़ी, म्हाँरी विथा न बूझे कोय ॥
काढ़ि कलेजो मैं धरूँ रे, कौवा तू ले जाय।
ज्याँ देसाँ म्हाँरो पिव बसै रे, वे देखत तू खाय ॥
म्हाँरे नातो नाम को रे, और न नातो कोय।

मीरा व्याकुल विरहनी रे, पिय दरसण दीज्यो मोय ॥

(७४)

स्याम मेरी आरति मागी हो।
गुरु परतापे पाइया तन दुरमति भागी हो॥
या तन को दियना करों मनसा करों वाती हो।
तेल भरावों प्रेम का वारों दिन राती हो॥
पाटी पारों ज्ञान की मति मांग संवारों हो।
तेरे कारन सांवरे धन जोवन वारों हो॥
यह सेजिया बहु रंग की बहु फूल बिछाये हो।
पंथ मैं जोहौं स्याम का अजहूं नहिं आये हो॥
सावन भादों ऊमड़ो हो वरषा रितु आई हो।
भौंह घटा घन घेरि के नैनन झरि लाई हो॥
मात पिता तुम को दियो तुम हीं भल जानो हो।
तुम तजि और भतार को मन में नहिं आनों हो॥
तुम प्रभु पूरन ब्रह्म हो पूरन पद दीजै हो।
मीरा व्याकुल बिहरनी अपनी करि लीजै हो॥

(७५)

राग पहाड़ी

घड़ी एक नहिं आवड़े, तुम दरसण बिन मोय।
तुम हो मेरे प्राण जी, का सूँ जीवण होय॥
धान न भावे नींद न आवे, बिरह सतावे मोय।
घायलसी घूमत फिरूँ रे, मेरा दरद न जाणे कोय॥

दिवस तो खाय गमायो रे, रैण गमाई सोय।
प्राण गमायो झूरताँ रे, नैण गमाई रोय॥
जो मैं ऐसा जाणती रे, प्रीत किये दुख होय।
नगर ढँढोरा फेरती रे, प्रीत करो मत कोय॥
पंथ निहारूँ डगर बुहारूँ, ऊबी मारग जोय।
मीरा के प्रभु कब रे मिलोगे, तुम मिलियाँ सुख होय॥

(७६)

राग आनंद भैरों

सखी मेरी नींद नसानी हो। टेक।
पिया को पंथ निहारते, सब रैन बिहानी हो॥
सखियन मिल के सीख दई, मन एक न मानी हो।
बिन देखे कल ना परे, जिय ऐसी ठानी हो॥
अंग छीन व्याकुल भई, मुख पिय पिय बानी हो।
अन्तर वेदन विरह की, वह पीर न जानी हो॥
ज्यों चातक घन को रटे, मछरी जिमि पानी हो।
मीरा व्याकुल विरहनी, सुध बुध विसरानी हो॥

(७७)

राग होली

रमैया बिन नींद न आवे।
नींद न आवे विरह सतावे, प्रेम की आँच डुलावे॥ टेक॥
बिन पिया जोत मँदिर अंधियारो दीपक दाय न आवे।

पिया विन मेरी सेज अलूनी, जागत रैंण विहावे।
पिया कब रे घर आवे ॥ १ ॥
दादुर मोर पपिहरा बोलैं, कोयल सबद सुणावे।
घुमँड घटा ऊलर होइ आई, दामिन दमक डरावे।
नैन भर लावै ॥ २ ॥
कह, करूँ कित जाऊँ मोरी सजनी, वेदन कूण वुतावे।
विरह नागण मोरी काया डसी है, लहर लहर जिव जावे।
जड़ी घस लावे ॥ ३ ॥
को है सखी सहेली सजनी, पिया कूँ आन मिलावे।
मीरा कूँ प्रभु कब रे मिलोगे, मन मोहन मोहिं भावे।
कबै हँस कर वतलावै ॥ ४ ॥

(७८)

नींदलड़ी नहिं आवे सारी रात, किस विध होइ परभात ॥टेक॥
चमक उठी सुपने सुध भूली, चन्द्र कला न सोहात ॥
तलफ तलफ जिव जाय हमारो, कब रे मिले दीना-नाथ ॥
भई हुँ दिवानी तन सुध भूली, कोई न जानी म्हांरी वात ॥
मीरा कहै बीती सोइ जानै, मरण जीवण उन हाथ ॥

(७९)

राग सावन

रे पपइया प्यारे कब को बैर चितारो ॥ टेक ॥
मैं सूती छी अपने भवन में, पिय पिय करत पुकारो ॥

दाध्या ऊपर लूण लगायो, हिवड़े करवत सारो ॥
उठि बैठो बृच्छ की डाली, बोल बोल कंठ सारो ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, हरि चरनाँ चित धारो ॥

(८०)

राग सादनी कल्याण

पपइया रे पिव की वाणि न बोल ॥ टेक ॥
सुणि पावेली बिरहणी, थारो रालैली आँख मरोड़ ।
चांच कटाऊँ पपइया रे, ऊपरि कालर लूण ।
पिव मेरा मैं पिव की रे तू पिव काहै त कूण ।
थारा सबद सुहावणा रे, जो पिव मेला आज ।
चांच मढ़ाऊँ थारी सोवनी रे, तू मेरे सिरताज ।
प्रीतम कूँ पतियाँ लिखूँ, कउवा तू ले जाइ ।
जाइ प्रीतम जी सूँ यूँ कहै रे थाँरी विरहणि धान न खाइ ।
मीरा दासी व्याकुली रे, पिव पिव करत विहाइ ।
वेगि मिलो प्रभु अन्तरजामी तुम विन रह्यो ही न जाइ ।

(८१)

जाओ हरि निरमोहड़ा रे, जाणी थांरी प्रीत ॥ टेक ॥
लगन लगी जब और प्रीत छी, अब कुछ अँवली रीत ॥
अमृत पाय विषै क्यूँ दीजे, कौण गाँव की रीत ॥
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर आप गरज के मीत ॥

(८२)

राग बागेश्वरी

मैं बिरहिन बैठी जागूँ, जगत सब सोवै री आली ॥ टेक ॥
बिरहिन बैठी रंग महल में, मोतियन की लड़ पोवै ।
इक बिरहिन हम ऐसी देखी, अंसुअन की माला पोवै ॥
तारा गिण गिण रैण बिहानी, सुखकी घड़ी कब आवै ।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, मिल के बिछुड़ न जावै ॥

(८३)

ऐसी लगन लगाय कहाँ तू जासी ॥ टेक ॥
तुम देख्यां बिन कल न पड़त है, तलफ तलफ जिय जासी ॥
तेरे खातर जोगण हूंगी, करवत लूंगी कासी ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, चरण कँवल की दासी ॥

(८४)

राग पूरिया कल्याण

साजन सुध ज्यूँ जाने त्यूँ लीजे हो ॥ टेक ॥
तुम बिन मेरे और न कोई कृपा रावरी कीजे हो ॥
दिवस न भूख रैन नहिं निद्रा यूँ तन पल पल छीजे हो ॥
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर मिल बिछुरन नहिं कीजे हो ॥

(८५)

राग तिलंवरी

नैना लोभी रे बहुरि सके नहिं आय ।
रोम रोम नख सिख सब निरखत, ललच रहे ललचाय ॥

(८७)

मैं ठाढ़ी गृह आपने रे, मोहन निकसे आय।
सारँग ओट तजे कुल अंकुस, वदन दिये मुसकाय॥
लोक कुटंबी वरज वरजहों, वतियाँ कहत वनाय।
चंचल-चपल अटक नहिं मानत, पर हथ गये विकाय॥
भली कहो कोइ बुरी कहो मैं, सब लई सीस चढ़ाय।
मीरा कहे प्रभु गिरधर के विन, पल भर रह्यो न जाय॥

(८६)

नैणा मोरे वाण पड़ी, साईं मोहिं दरस दिखाई॥ टेक॥
चित्त चढ़ी मेरे माधुरि मूरत, उर विच आन अड़ी।
कैसे प्राण पिया बिनु राखूँ, जीवण मूर जड़ी॥
कब की ठाढ़ी पंथ निहारूँ, अपणे भवन खड़ी।
मीरा प्रभु के हाथ विकानी, लोक कहे बिगड़ी॥

(८७)

राग देस

दरस विन दूखन लागे नैन॥ टेक॥
जबसे तुम बिछरे मेरे प्रभुजी, कबहुँ न पायों चैन।
सबद सुनत मेरी छतियाँ कंपै मीठे लगे तुम बैन॥
एक टकटकी पंथ निहारूँ, भई छमासी रैन॥
विरह विथा कासूँ कहूँ सजनी, वह गइ करवत ऐन॥
मीरा के प्रभु कब रे मिलोगे दुख मेटन सुख देन॥

(८८)

राग कामोद

आली रे मेरे नैनन बान पड़ी ॥ टेक ॥

चित्त चढ़ी मेरे माधुरी मूरत, उर बिच आन अड़ी ॥

कब की ठाढ़ी पंथ निहारूँ अपने भवन खड़ी ॥

कैसे प्रान पिया बिन राखूँ, जीवन मूल जड़ी ॥

मीरा गिरधर हाथ बिकानी, लोग कहै बिगड़ी ॥

(८९)

पिया अब घर अब आज्यो मोरे, तुम मोरे हूँ तोरे ॥ टेक ॥

मैं जन तेरा पंथ निहारूँ, मारग चितवत तोरे ॥

अवध बदीती अजहुँ न आये दुतियन सूँ नेह जोरे ॥

मीरा कहे प्रभु कब रे मिलोगे, दरसन बिन दिन दोरे ॥

(९०)

राग जगला

कभी म्हाँरी गली आव रे, जिया की तपत बुझाव रे
म्हाँरे मोहना प्यारे ॥ टेक ॥

तेरे साँवले वदन पर कई कोट काम वारे ॥

तेरा खूवी के दरस पै, नैन तरसते म्हाँरे ॥

घायल फिरूँ तड़पती पीड़ जाने नहिं कोई ॥

जिस लागी पीड़ प्रेम की, जिन लाई जाने सोई ।

जैसे जल के सोखे, मीन क्या जिवैं विचारे ॥

कृपा कीजे दरस दीजे मीरा नन्द के दुलारे ॥

(९१)

वारी वारी हो राम हूँ वारी तुम आज्यो गली हमारी ॥टेक॥
तुम देख्याँ बिन कल न पड़त है, जोऊँ बाट तुमारी ॥
कूण सखी सूँ तुम रँग राते हम सूँ अधिक पियारी ॥
किरपा कर मोहिं दरसण दीज्यो सब तकसीर बिसारी ॥
तुम सरणागत परम दयाला भवजल तार मुरारी ॥
मीरा दासी तुम चरणन की बार बार बलिहारी ॥

(९२)

मैं तो लागि रहों नँदलाल से ॥ टेक ॥
हमरे बाटहिं दूज न यार ।
लाल लाल पगिया झिन झिन बार ॥
साँकर खटुलना दुइ जन बीच ।
मन कइले बरपा तन कइले कीच ॥
कहाँ गइलैं बछरूँ कहँ गइलीं गाय ।
कहँ गइल धेनु चरावन राय ॥
कहँ गइलीं गोपी कहँ गइलैं बाल ।
कहँ गइले मुरली बजावनहार ॥
मीरा के प्रभु गिरधर लाल ।
तुम्हरे दरस बिन भइल बेहाल ॥

(९३)

राग टोड़ी

म्हांरे घर आज्यो प्रीतम प्यारा तुम बिन सब जग खारा ॥ टेक ॥

तन मन धन सब भेंट करूँ, और भजन करूँ मैं थारा।
तुम गुणवंत बड़े गुण सागर, मैं हूँ जी औगणहारा ॥
मैं निगुणी गुण एको नाहीं तुझ में जी गुण सारा ॥
मीरा कहे प्रभु कबहि मिलोगे, बिन दरसण दुखियारा ॥

(९४)

धुन लावनी

तुम्हरे कारण सब सुख छोड़्यो, अब मोहिं क्यूं तरसावो ॥
बिरह बिथा लागी उर अन्दर, सो तुम आय बुझावो ॥
अब छोड़्यां नहिं बनै प्रभु जी, हँस कर तुरत बुलावो ॥
मीरा दासी जनम जनम की, अंग सूँ अंग लगावो ॥

(९५)

तुम आज्यो जी रामा, आवत आस्यां सामा ॥ टेक ॥
तुम मिलियां मैं बहु सुख पाऊँ, सरैं मनोरथ कामा ॥
तुम बिच हम बिच अन्तर नाहीं, जैसे सूरज घामा ॥
मीरा के मन और न मानै, चाहे सुन्दर स्यामा ॥

(९६)

होता जाजो राज हमारे महलों होता जाजो राज ॥ टेक ॥

मैं औगुनी मेरा साहिब अगुना, संत सँवारैं काज ॥
मीरा के प्रभु मँदिर पधारो, करके केसरिया साज ॥

(९७)

राग आसावरी

प्यारे दरसण दीज्यो आय, तुम बिन रह्यो न जाय ॥ टेक ॥
जल बिन कँवल चंद बिन रजनी, ऐसे तुम देख्याँ बिन
सजनी ।
याकुल व्याकुल फिरूँ रैण दिन, विरह कलेजो खाय ॥
दिवस न भूख नींद नहिं रैणा, मुख सूँ कथत न आवै वैणा ।
कहा कहूँ कुछ कहत न आवै, मिलकर तपत बुझाय ॥
क्यूँ तरसावो अंतरजामी, आय मिलो किरपा कर स्वामी ।
मीरा दासी जनम जनम की, परी तुम्हारे पाय ॥

(९८)

पिया इतनी विनती सुन मोरी, कोइ कहियो रे जाय ॥ टेक ॥
औरन सूँ रस बतियां करत हो, हमसे रहे चित चोरी ॥
तुम बिन मेरे और न कोई, मैं सरणागत तोरी ॥
आवण कह गये अजहुँ न आये, दिवस रहे अब थोरी ॥
मीरा कहे प्रभु कब रे मिलोगे, अरज करूँ कर जोरी ॥

(९९)

हमरे रौरे लागलि कैसे छूटै ॥ टेक ॥
जैसे हीरा हनत निहाई, तैसे हम रौरे बनि आई ॥
जैसे सोना मिलत सोहागा, तैसे हम रौरे दिल लागा ॥

जैसे कमल नाल विच पानी, तैसे हम रौरे मन मानी ॥
जैसे चन्द्रहि मिलत चकोरा, तैसे हम रौरे दिल जोरा ॥
जैसे मीरा पति गिरधारी, तैसे मिलि रहु कुंज विहारी ॥

(१००)

प्रेम नी प्रेम नी प्रेम नी रे, मन लागी कटारी
प्रेम नी रे ॥ टेक ॥
जल जमुना माँ भरवा गया तौ, हती गागर माथे
हेम नी रे ॥
कौंचे ते तांत ने हरिजीये बाँधी, जेम खेचे तेमनी रे ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, साँवली सुरत सुभ एमनी रे ॥

(१०१)

वैद को सारो नाहीं रे माई, वैद को नहिं सारो ॥ टेक ॥
कहत ललिता वैद बुलाऊँ आवै नंद को प्यारो।
वो आयाँ दुख नाहिं रहैगो, मोहि पतियारो ॥
वैद आय के हाथ जो पकड़्यो, रोग है भारो।
परम पुरुष की लहर व्यापी डस गयो कारो ॥
मोरचंदो हाथ ले, हरि देत है डारो।
दासी मीरा लाल गिरधर, विष कियो न्यारो ॥

(१०२)

राग देस

चलौं वाही देस प्रीतम पावौं, चलौं वाही देस ॥ टेक ॥
कहो कसुम्बी सारी रँगावौं, कहो तो भगवा भेस ॥

कहो तो मोतीयन माँग भरावाँ, कहो छिटकावाँ केस ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, सुनियो विरद के नरेस ॥

(१०३)

मेरे प्रीतम प्यारे राम ने लिख भेजूँ री पाती ॥ टेक ॥
स्याम सनेसो कबहुँ न दीन्हो, जान बूझ गुझ वाती ॥
ऊँची चढ़ चढ़ पंथ निहारूँ रोय रोय अँखियाँ राती ॥
तुम देख्याँ विन कल न परत है, हियो फटक मोरी छाती ॥
मीरा कहे प्रभु कब रे मिलोगे, पूर्व जनमके साथी ॥

(१०४)

स्यामको सँदेसो आयो, पतियाँ लिखाय माय ॥ टेक ॥
पतियाँ अनूप आई, छतियाँ लगाय लीनी ।
अचल की दे दे ओट, ऊधो पै वँचाई है ॥
बाल की जटा बनाऊँ अंग तो भभूत लाऊँ ।
फाड़ूँ चीर पहरूँ कंथा, जोगण वण जाऊँगी ॥
इन्द्र के नगारे बाजे वादलकी फौज आई ।
तोपखाना पेसखाना उतरा आय बाग में ॥
मथुरा उजाड़ कीन्हीं, गोकुल बसाय लीन्हीं ।
कुब्जा सूँ बाँध्यो हेत, मीरा गाय सुनाई है ॥

(१०५)

कूण बाँचै पाती, विन प्रभु कूण बांचै पाती ॥ टेक ॥
कागद ले ऊधो जी आये, कहाँ रहे साथी ।
आवत जावत पाँव घिसा रे (वाला) अँखियाँ भइँ राती ॥

कागद ले राधा बाँचण बैठी, भर आई छाती।
नैन नीरज में अम्ब बहे रे (बाला), गंगा बहि जाती॥
पाना ज्यूँ पीली पड़ी रे (बाला), अन्न नहिं खाती।
हरि बिन जिवड़ो यूँ जले रे (बाला), ज्यूं दीपक सँग बाती॥
साँचा कुछ चकोर चन्दा, झोलै बहि जाती।
ब्रज नारी की बीनती रे (बाला), राम मिले मिल जाती॥
मनें भरोसो राम को रे (बाला), डूबत तार्‌यो हाथी।
दास मीरा लाल गिरधर, सांकड़ारो साथी॥

(१०६)

राग सुख सोरठ

पतियां में कैसे लिखूं, लिखिही न जाई॥ टेक॥
कलम भरत मेरे कर कंपत, हिरदो रहो घर्राई॥
बात कहूँ मोहिं बात न आवे, नैण रहे झर्राई॥
किस विधि चरण कमल मैं गहिहों, सबहि अंग थर्राई॥
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर, सब ही दुख विसराई॥

(१०७)

राग सारंग

या ब्रज में कछु देख्यो री टोना॥ टेक॥
ले मटुकी सिर चली गुजरिया, आगे मिले बाबा
नंदजी के छोना।
दधि को नाम बिसरि गयो प्यारी, ले लेहु रे कोई स्याम
सलोना॥

बिन्द्रावन की कुञ्ज गलिन में, आँख लगाइ गयो
मनमोहना।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, सुन्दर स्याम सुघर
रसलोना॥

(१०८)

राग मारू

कोइ स्याम मनोहर ल्योरी, सिर धरैं मटकिया डोले॥टेक॥
दधि को नाँव बिसर गई ग्वालन, हरि ल्यो हरि ल्यो बोलै।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, चेरी भई बिन मोलै।
कृष्ण रूप छकी है ग्वालनि, औरहि औरे बोलै।

(१०९)

राग जौनपुरी

सखी री लाज बैरन भई॥ टेक॥
श्री लाल गोपाल के सँग काहे नाहीं गई॥
कठिन क्रूर अक्रूर आयो साजि रथ कहँ नई॥
रथ चढ़ाय गोपाल लै गो हाथ मींजत रही॥
कठिन छाती स्याम बिछुरत बिरह तें तन तई॥
दास मीरा लाल गिरधर बिखर क्यों ना गई॥

(११०)

गोविंद सूँ प्रीत करत, तबहिं क्यूँ न हटकी।
अब तो बात फैल परी, जैसे बीज बट की॥

वीज को विचार नाहिं, छाँय परी तट की।
अब चूको तो ठौर नाहिं, जैसे कला नट की॥
जल की घुरी गांठ परी, रसना गुन रट की।
अब तो छुड़ाय हारी, बहुत बार झटकी॥
घर घर में घोल मठोल, वानी घट घट की।
सब ही कर सीस धारि, लोक लाज पटकी॥
मद की हस्ती समान, फिरत प्रेम लटकी।
दास मीरा भक्ति बुन्द, हिरदय बिच गटकी॥

(१११)

राग धमार

स्याम मोसूँ ऐंडो डोले हो॥ टेक॥
औरन सूँ खेले धमार, म्हां सूँ मुखहुँ न बोले हो॥
म्हांरी गलियाँ ना फिरे, वा के आँगण डोले हो॥
म्हांरी अँगुली ना छुवे, वा को वहियाँ मोरे हो॥
म्हांरे अँचरा ना छुवे, वा को घूँघट खोले हो॥
मीरा को प्रभु सांवरो, रँग-रसिया डोले हो॥

खण्ड ३

होली और सावन

(११२)

राग होरी सिंदूरा

फागुन के दिन चार रे, होली खेल मना रे ॥ टेक ॥
बिन करताल पखावज बाजे, अनहद की झनकार रे ॥
बिन सुर राग छतीसूँ गावे, रोम रोम रँग सार रे ॥
सील सँतोष की केसर घोली, प्रेम प्रीत पिचकार रे ॥
उड़त गुलाल लाल भये बादल, बरसत रंग अपार रे ॥
घटके पट सब खोल दिये हैं, लोक लाज सब डार रे ॥
होली खेल प्यारी पिय घर आये, सोइ प्यारी पिय प्यार रे ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, चरन कँवल बलिहार रे ॥

(११३)

रँग भरी रँग भरी रँग सूँ भरी री,
होली आई प्यारी रँग सूँ भरी री ॥ टेक ॥

उड़त गुलाल लाल भये बादल,
पिचकारिन की लागी झरी री ॥
चोवा चन्दन और अरगजा,
केसर गागर भरी धरी री ॥
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर,
चेरी होय पायन परी री ॥

(११४)

राग होली

होली पिया विन लागै खारी, सुनो री सखी मेरी प्यारी ॥टेक॥
सूनो गांव देस सब सूनो, सूनी सेज अटारी।
सूनी विरहन पिव विन डोलै, तज दइ पीव पियारी।
भई हूँ या दुखकारी।
देस विदेस सँदेस न पहुँचै, होय अँदेसा भारी।
गिणतां गिणतां घस गई रेखा, आंगरियाकी सारी।
अजहुँ नहिं आये मुरारी।
बाजत झांझ मृदंग मुरलिया, बाज रही इकतारी।
आई बसंत कंथ घर नाहीं, तन में जर भया भारी।
स्याम मन कहा बिचारी।
अब तो मेहर करो मुझ ऊपर, चित दे सुणो हमारी।
मीरा के प्रभु मिलज्यो माधो, जनम जनमकी क्वाँरी।
लगी दरसन की तारी।

(११५)

राग होली

होली पिया बिन मोहिं न भावे, घर आँगण न सुहावे ॥ टेक ॥
दीपक जोय कहा करूँ होली, पिय परदेस रहावे ।
सूनी सेज जहर ज्यूँ लागे, सुसक सुसक जिय जावे ।
नींद नैन नहिं आवे ॥
कब की ठाढ़ी मैं मग जोऊँ, निस दिन विरह सतावे ।
कहा कहूँ कछु कहत न आवे, हिवड़ो अति अकुलावे ।
पिया कब दरस दिखावे ॥
ऐसा है कोइ परम सनेही, तुरत सँदेसो लावे ।
वा विरियाँ कब होसी मोकूँ, हँसकर निकट बुलावे ।
मीरा मिल होली गावे ॥

(११६)

राग होली

किण सँग खेलूँ होली, पिया तज गये हैं अकेली ॥ टेक ॥
माणिक मोती सब हम छोड़े, गल में पहनी सेली ।
भोजन भवन भलो नहिं लागै, पिया कारण भई गैली ।
मुझे दूरी क्यूँ म्हेली ॥
अब तुम प्रीत और से जोड़ी, हमसे करी क्यूँ पहिली ।
बहु दिन बीते अजहुँ नहिं आये, लग रही तालावेली ।
किण बिलमाये हेली ॥

स्याम बिना जिवड़ो मुरझावे, जैसे जल बिन वेली।
मीरा कूँ प्रभु दरसन दीज्यो, जनम जनम की चेली।
दरसन बिन खड़ी दुहेली ॥

(११७)

इक अरज सुनो पिय मोरी, मैं किण संग खेलूं होरी ॥ टेक
तुम तो जाय बिदेसाँ छाये, हम से रहे चित चोरी।
तन आभूपण छोड़े सबही, तज दिये पाट पटो री।
मिलनकी लग रही डोरी ॥
आप मिल्याँ बिन कल न पड़त है, त्यागे तलक तमोली।
मीरा के प्रभु मिलज्यो माधो, सुणज्यो अरजी मोरी।
रस बिन बिरहिन दोरी ॥

(११८)

राग सावन

मतवारो बादल आयो रे, हरि के संदेसो कुछ नहिं
लायो रे ॥ टेक ॥
दादुर मोर पपीहा बोले, कोयल सब्द सुनायो रे।
कारी अँधियारी बिजुली चमके, बिरहन अति
डरपायो रे ॥
गाजे बाजे पवन मधुरिया, मेहा अति झड़ लायो रे।
फूँके काली नाग बिरह की जारी, मीरा मन हरि
भायो रे ॥

(११९)

राग मलार

बादल देख झरी हो, स्याम मैं बादल देख झरी ॥ टेक ॥
काली पीली घटा उमँगी, बरसयो एक घरी ॥
जित जाऊँ तित पानिहि पानी, हुई सब भोम हरी ॥
जा का पिव परदेस बसत है, भीजै बार खरी ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, कीज्यो प्रीत खरी ॥

(१२०)

सावण दे रह्यो जोरा रे, घर आओ जो स्याम मोरा रे ॥टेक॥
उमड़ घुमड़ चहुँ दिस से आया, गरजत है घन घोरा रे ॥
दादुर मोर पपीहा बोले, कोयल कर रही सोरा रे ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, ज्यों वारूँ सोही थोरा रे ॥

(१२१)

भींजे म्हाँरो दाँवन चीर, सावणियो लूम रह्यो रे ॥ टेक ॥
आप तो जाय बिदेसाँ छाये, जिवड़ो धरत न धीर ॥
लिख लिख पतियाँ सँदेसा भेजूँ, कब घर आवै म्हाँरो पीव ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, दरसन दीने वलवीर ॥

(१२२)

राग कलिंगड़ा

सुनी मैं हरि आवन की आवाज ॥ टेक ॥
महल चढ़ि चढ़ि जोऊँ मोरी सजनी, कब आवे म्हाराज ॥
दादुर मोर पपीहा बोलै, कोइल मधुरे साज ॥

उमग्यो इन्द्र चहूँ दिस वरसै, दामिन छोड़ी लाज ॥
धरती रूप नवा नवा धरिया, इन्द्र मिलन के काज ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, वेग मिलो म्हाराज ॥

(१२३)

वरसे वदरिया सावन की, सावन की मन भावनकी ॥ टेक ॥
सावन में उमग्यो मेरो मनवा, भनक सुनि हरि आवनकी ॥
उमड़ घुमड़ चहुँ दिससे आयो, दामिन दमके झर लावनकी ॥
नन्ही नन्ही बूँदन मेहा वरसे, सीतल पवन सोहावनकी ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, आनन्द मंगल गावनकी ॥

(१२४)

राग सारंग

नन्द नँदन विलमाई, वदरा ने घेरी माई ॥ टेक ॥
इत घन लरजे उत घन गरजे, चमकत विज्जु सवाई ॥
उमड़ घुमड़ चहुँ दिस से आया, पवन चले पुरवाई ॥
दादुर मोर पपीहा वोले, कोयल सब्द सुनाई ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, चरन कमल चित लाई ॥

(१२५)

मेहा वरसवो करेरे, आज तो रमियो मेरे घरे रे ॥ टेक ॥
नान्ही नान्ही बूँद मेघ घन वरसे, सूखे सरवर भरे रे ॥
वहुत दिनाँ पै प्रीतम पायो, विछुरन को मोहिं डर रे ॥
मीरा कहे अति नेह जुड़ायो, मैं लियो पुरवलो वर रे ॥

(१२६)

देखी बरषा की सरसाई, मोरे पिया जी की मन में आई ॥टेक॥
नन्ही नन्ही बूँदन बरसन लाग्यो, दामिन दमके झर लाई ॥
स्याम घटा उमड़ी चहुँ दिस से, बोलन मोर सुहाई ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, आनँद मंगल गाई ॥

(१२७)

राग नट बिलावल

रे सांवलिया म्हांरे आज रँगीली गणगोर छे जी ॥ टेक ॥
काली पीली बदली में बिजली चमके, मेघ घटा घनघोर छे जी ॥
दादुर मोर पपीहा बोले, कोयल कर रही सोर छे जी ॥
आप रँगीला सेज रँगीली, और रँगीलो सारो साथ छे जी ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, चरनां में म्हांरो जोर छे जी ॥

खण्ड ४

संतभास

(१२८)

राग शुद्ध सारंग

चलो अगम के देस काल देखत डरे।
वहां भरा प्रेम का हौज हंस केलो करे॥ टेक॥
ओढ़न लज्जा चीर धीरज को घाघरो।
छिमता कांकण हाथ सुमत को मुन्दरो॥
कांचो है विस्वास चूड़ो चित ऊजलो।
दिल दुलड़ी दरियाव सांच को दोवड़ो॥
दांतों अमृत मेख दया को बोलणो।
उबटन गुरु को ज्ञान ध्यान को धोवणो॥
कान अखोटा ज्ञान जुगत को झठणो।
बेसर हरि को नाम काजल है धरम को॥
जीहर सील सँतोष निरत को घूँघरो।
बिँदली गज और हार तिलक गुरु ज्ञान को॥
सज सोलह सिँगार पहिरि सोने राखड़ी।

साँवलिया सूँ प्रीत औरों से आखड़ो ॥
पतिवरता की सेज प्रभु जी पधारिया ।
गावै मीरा बाई दासी कर राखिया ॥

(१२९)

भर मारी रे बानाँ मेरे सतगुरु विरह लगाय के ॥ टेक ॥
पावन पंगा कानन बहिरा, सूझत नाहीं नैना ॥
खड़ी खड़ी रे पंथ निहारूँ, मरम न कोई जाना ॥
सतगुरु औषद ऐसी दीन्ही, रूम रूम भइ चैना ॥
सतगुरु जस्या बैद न कोई, पूछो वेद पुराना ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, अमर लोक में रहना ॥

(१३०)

आज म्हारे साधू जन नो संग रे, राणा म्हाँरा भाग भल्याँ ॥टेक॥
साधू जन ने संग जो करिये, चढ़ंते चौगणो रंग रे ॥
साकट जन नो संग न करिये, पड़े भजन में भंग रे ॥
अठसठ तीरथ संतों ने चरणे, कोटि कासी ने सोय गंग रे ॥
निन्दा करसे नरक कुँडमांजासे, थासे आँधला अपंग रे ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, संतों नीरज म्हांरे अंग रे ॥

(१३१)

मनखा जन्म पदारथ पायो, ऐसी बहुर न आती ॥ टेक ॥
अब के मोसर ज्ञान विचारो, राम राम मुख गाती ।
सतगुरु मिलिया सुंज पिछाणी, ऐसा ब्रह्म मैं पाती ॥

सगुरा सूरा अमृत पीवे निगुरा प्यासा जाती।
मगन भया मेरा मन सुख में, गोविंद का गुण गाती॥
साहब पाया आदि अनादी, नातर भव में जाती।
मीरा कहे इक आस आप की, औरां सूं सकुचाती॥

(१३२)

मीरा मन मानी सुरत सैल असमानी॥ टेक॥
जब जब सुरत लगे वा घर की, पल पल नैनन पानी॥
ज्यों हिये पीर तीर सम सालत, कसक कसक कसकानी॥
रात दिवस मोहिं नींद न आवत, भावे अन्न न पानी॥
ऐसी पीर विरह तन भीतर, जागत रैन विहानी॥
ऐसा वैद मिले कोइ भेदी, देस विदेस पिछानी॥
तासों पीर कहूं तन केरी, फिर नाहिं भरमों खानी॥
खोजत फिरों भेद वा घर को, कोई न करत बखानी॥
रैदास संत मिले मोहिं सतगुरु, दीन्हा सुरत सहदानी॥
मैं मिली जाय पाय पिय अपना, तब मोरी पीर बुझानी॥
मीरा खाक खलक सिर डारो, मैं अपना घर जानी॥

(१३३)

मुझ अबला ने मोटी नीरांत थई सामलो घरेनु
म्हांरे सांचु रे॥ टेक॥
वाली घड़ाऊँ वीठल वर केरी, हार हरि नो म्हांरे हइये रे।
चीन माल चतुरभुज चुड़लो, सिद सोनी घरे जइये रे॥
झांझरिया जग जीवन केरा, किस्न गलां री कंठी रे।

बिछुवा घुँघरा राम नरायण, अनवट अंतरजामी रे ॥
पेटी घड़ाऊँ पुरुसोतम केरी, टीकम नाम नूँ ताली रे ।
कुँची कराऊँ करुना नँद केरी, तेमाँ घैणा नूँ मारूँ रे ॥
सासर वासो सजी ने बैठी, हवे नथी काइ काँचू रे ।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, हरि नु चरणे जाँचू रे ॥

(१३४)

राग जैजैवंती

गली तो चारो बंद हुई, मैं हरि से मिलूँ कैसे जाय ॥ टेक ॥
ऊँची नीची राह रपटोली, पाँव नहीँ ठहराय ।
सोच सोच पग धरूँ जतन से, बार बार डिग जाय ॥
ऊँचा नीचा महल पिया का, हम से चढ्या न जाय ।
पिया दूर पंथ म्हाँरा झीना, सुरत झकोला खाय ॥
कोस कोस पर पहरा बैठ्या, पैंड पैंड बटमार ।
हे विधना कैसी रच दीन्ही, दूर बस्यो म्हाँरो गाम ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर सतगुरु दई बताय ।
जुगन जुगन से बिछुड़ी मीरा, घर में लीन्हा आय ॥

(१३५)

राग जोगिया

वाल्हा मैं वैरागिण हूँगी हो ।
जीँ जीँ भेप म्हाँरी साहिव रीझै, सोइ सोइ भेप
धरूँगी हो ॥ टेक ॥
सील संतोप धरूँ घट भीतर, समता पकड़ रहूँगी हो ।

जा को नाम निरंजण कहिये, ता को ध्यान धरूँगी हो ॥
गुरू ज्ञान रँगूँ तन कपड़ा, मन मुद्रा पेरूँगी हो।
प्रेम प्रीत सूँ हरिगुण गाऊँ, चरणन लिपट रहूँगी हो ॥
या तन की मैं करूँ कींगरी, रसना नाम रटूँगी हो।
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर, साधाँ संग रहूँगी हो ॥

(१३६)

मैं तो राजी भई मेरे मन में, मोहिं पिया मिले
इक छिन में ॥ टेक ॥
पिया मिल्या मोहिं कृपा कीन्ही, दीदार दिखाया हरि ने ॥
सतगुरु सबद लखाया अँस री, ध्यान लगाया धुन में ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, मगन भई मेरे मन में ॥

(१३७)

नैनन वनज वसाऊँ री, जो मैं साहिव पाऊँ ॥ टेक ॥
इन नैनन मेरा साहिव वसंता, डरती पलक न नाऊँ री ॥
त्रिकुटी महल में वना है झरोखा, तहाँ से झाँकी लगाऊँ री ॥
सुन्न महल में सुरत जमाऊँ, सुख की सेज विछाऊँ री ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, वार वार वल जाऊँ री ॥

(१३८)

राग माखा

इन सरवरिया पाल मीराँ वाई साँपड़े।
साँपड़ किया अस्नान, सुरज स्वामी जप करे ॥

(१०६)

[प्रश्न] होय विरंगी नार, डगराँ विच क्योँ खड़ी।
काईं थारो पीहर दूर, घराँ सासू लड़ी ॥
[उत्तर] नहीँ म्हाँरो पीहर दूर, घराँ सासू लड़ी।
चल्यो जा रे असल गँवार, तुझे मेरी क्या पड़ी ॥
गुरु म्हाँरा दीनदयाल हीराँ का पारखी।
दियो म्हाँने ज्ञान बताय, सँगत कर साध री ॥
इन सरवरिया रा हंस, सुरँग थारी पाँखड़ी।
राम मिलन कद होय, फड़ोके म्हाँरी आँख री ॥
राम गये वनवास को, सब रँग ले गये।
ले गये म्हाँरी काया को सिँगार, तुलसी की माला दे गये ॥
खोई कुल की लाज, मुकँद थारे कारने।
वेगहि लीजो सम्हाँल, मीरा पड़ी वारने ॥

(१३९)

जोगी मत जा मत जा मत जा, पाय परूँ मैं चेरी तेरी हौं ॥
प्रेम भगति को पैंड़ी ही न्यारो, हम कूँ गैल बता जा ॥
अगर चंदन की चिता रचाऊँ, अपणे हाथ जला जा ॥
जल बल भई भस्म की ढेरी, अपने अंग लगा जा ॥
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर, जोत में जोत मिला जा ॥

(१४०)

जोगिया तू कब रे मिलेगो आई ॥ टेक ॥
तेरेहि कारण जोग लियो है, घर घर अलख जगाई ॥

दिवस भूख रैन नहि निद्रा, तुझ विन कुछ न सुहाई ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, मिल कर तपत वुझाई ॥

(१४१)

जावादे री जावादे जोगी किसका मीत ॥ टेक ॥
सदा उदासी मोरी सजनी निपट अटपटी रीत ॥
वोलत वचन मधुर से मीठे जोरत नाहीं प्रीत ॥
हूँ जाणूँ या पार निभेगी छोड़ चला अधवीच ॥
मीरा कहै प्रभु गिरधर नागर, प्रेम पियारा मीत ॥

(१४२)

जोगिया री सूरत मन में वसी ॥ टेक ॥
नित प्रति ध्यान धरत हूँ दिल में, निस दिन होत कुसी ॥
कहा करूँ कित जाउँ मोरी सजनी, मानो सरप डसी ॥
मीरा कहे प्रभु कव रे मिलोगे, प्रीत रसीली वसी ॥

(१४३)

जोगिया री प्रीतड़ी है, दुखड़ा री मूल ॥ टेक ॥
हिल मिल वात वनावत मीठी, पीछे जावत भूल ॥
तोड़त जेज करत नहिँ सजनी, जैसे चंपेली के फूल ॥
मीरा कहै प्रभु तुम्हरे दरस विन, लगत हिवड़ा में सूल ॥

(१४४)

जोगिया ने कहियो रे आदेस ।
आऊँगी मैं नाहिँ रहूँ रे, कर जटाधारी भेस ॥
चीर को फाडूँ कंथा पहिरूँ, लेऊँगी उपदेस ।

गिणते गिणते घिस गई रे, मेरी उँगलियों की रेख ॥
मुद्रा माला भेष लूँ रे खप्पड़ लेऊँ हाथ ।
जोगिन होय जग ढूँढ़सूँ रे, रावलिया के साथ ॥
प्राण हमारा वहाँ वसत है, यहाँ तो खाली खोड़ ।
मात पिता परिवार सूँ रे, रही तिनका तोड़ ॥
पाँच पचीसो बस किये, मेरा पल्ला न पकड़ै कोय ।
मीरा व्याकुल विरहिनी, कोइ आन मिलावै मोय ॥

(१४५)

कोई दिन याद करोगे रमता राम अतीत ॥ टेक ॥
आसण माँड़ अडिग होय बैठा, याही भजन की रीत ॥
मैं तो जाणूँ जोगी संग चलेगा, छाँड़ गयो अधबीच ॥
आत न दीसे जात न दीसे, जोगी किस का मीत ॥
मीरा कहै प्रभु गिरधर नागर, चरणन आवे चीत ॥

(१४६)

मिलता जाज्यो हो गुर ज्ञानी, थाँरी सूरत देखि लुभानी ॥
मेरो नाम बूझि तुम लीज्यो, मैं हूँ बिरह दिवानी ॥
रात दिवस कल नाहिं परत है, जैसे मीन बिन पानी ॥
दरस विना मोहि कछु न सुहावे, तलफ तलफ मर जानी ॥
मीरा के चरणन की चेरी, सुन लीजे सुखदानी ॥

खण्ड ५

जीवन-धारा

(१४७)

[मीरा]-माई म्हांने सुपने में, परण गया जगदीस।
सोती को सुपना आविया जो, सुपना विस्वा वीस॥ टेक॥
[माई]-गैली दीखे मीरा वावली, सुपना आल जंजाल।
[मीरा]-माई म्हांने सुपने में, परण गया गोपाल॥
अंग अंग हल्दी मैं करी जी. सुधे भीज्यो गात।
माई म्हांने सुपने में, परण गया दीनानाथ॥
छप्पन कोट जहां जान पधारें, दुलहा श्री भगवान्।
सुपने में तोरन वांधियो जी सुपने में आई जान॥
मीरा को गिरधर मिल्या जी, पूर्व जनम के भाग।
सुपने में म्हांने परण गया जी, हो गया अचल सुहाग॥

(१४८)

म्हांना गुरु गोविंद री आण, गोरल ना पूजां॥ टेक॥
[सास]-ओरज पूजै गोरज्या जी थे क्यूं पूजो न गोर।
मन वंछत फल पावस्यो जी, थे क्यूं पूजो ओर॥ १॥

(११३)

[मीरा]-नहिँ हम पूजाँ गोरज्यां जी, नहिँ पूजाँ अनदेव।
परम सनेही गोविँदो, थे कांइ जानो म्हांरो भेव ॥ २ ॥
[सास]-वाल सनेही गोविँदो, साथ संताँ को काम।
थे वेटी राठोड़ की, थाँ ने राज दियो भगवान ॥ ३ ॥
[मीरा]-राज करै ज्यानाँ करणे दीज्यो, मैँ भगताँ री दास।
सेवा साधू जनन की, म्हारे राम मिलण की आस ॥ ४ ॥
[सास]-लाजै पीहर सासरो, माइतणो मोसाल।
सब ही लाजै मेड़तिया जी, थाँसूँ बुरा कहे संसार ॥ ५ ॥
[मीरा]-चोरी कराँ न मारगी, नहिँ मैँ करूँ अकाज।
पुन्न के मारग चालताँ, झक मारो संसार ॥ ६ ॥
नहिँ मैं पीहर सासरे, नहीँ पिया जी री साथ।
मीरा ने गोविँद मिल्या जी, गुरु मिलिया रैदास ॥ ७ ॥

(१४९)

[ऊदा]-भाभी मीरा कुल ने लगाई गाल,
ईडर गढ़ का आया जी ओलंवा।
[मीरा]-बाई ऊदा थाँरे म्हांरे नातो नाहिँ,
वासो वस्याँ का आया जी ओलंवा ॥
[ऊदा]-भाभी मीरा का साधां का संग निवार,
सारो सहर थाँरी निंदा करै।
[मीरा]-बाई ऊदा करै तो पड़्या झख मारो,
मन लागो रमता राम सूँ ॥

[ऊदा]-भाभी मीरा पहरोनी मोत्यां को हार,
गहणो पहरो रतन जड़ाव को।
[मीरा]-बाई ऊदा छोड़्यो मैं मोत्यां को हार,
गहणो तो पहर्यो सील संतोष को॥
[ऊदा]-भाभी मीरा औरां के आवेजी आछी छड़ी जान,
थारे आवे छै हरिजन पावणा।
[मीरा]-बाई ऊदा चढ़ चौबारां झांक,
साधों की मंडली लागे सुहावणी॥
[ऊदा]-भाभी मीरा लाजे लाजे गढ़ चीतौड़,
राणोजी लाजे गढ़ रा राजवी।
[मीरा]-बाई ऊदा तार्यो तार्यो गढ़ चीतौड़,
राणाजी तार्या गढ़ का राजवी॥
[ऊदा]-भाभी मीरा लाजे लाजे थांरा मायन बाप,
पीहर लाजे जी थांरो मेड़ती।
[मीरा]-बाई ऊदा तार्या में तो मायन बाप,
पीहर तार्यो जी मेड़तो॥
[ऊदा]-भाभी मीरा राणा जी कियो छै थां पर कोप,
रतन कचोले विष घोलियो।
[मीरा]-बाई ऊदा घोल्यो तो घोलण दो,
कर चरणामृत वाही में पीवस्यां॥
[ऊदा]-भाभी मीरा देखतड़ां ही मर जाय,
यो विष कहिये वासक नागको।

[मीरा]-बाई ऊदा नहीँ म्हाँरे मायत बाप,
अमर डाली धरती झेलिया ॥
[ऊदा]-भाभी मीरा राणा जी ऊभा छे थाँरे द्वार,
पोथी माँगे छे थाँरा ज्ञान की।
[मीरा]-बाई ऊदा पोथी म्हाँरी खाँड़ा की धार,
ज्ञान निभावण राणो है नहीँ ॥
[ऊदा]-भाभी मीरा राणाजी रो वचन न लोप,
उन रूठ्याँ भाड़ी कोउ नहीँ।
[मीरा]-बाई ऊदा रमापति आवे म्हारी भीड़,
अरज करूँ छूँ ता सूँ वीनती ॥

(१५०)

[ऊदाबाई]-थाँने बरज बरज मैं हारी, भाभी मानो बात हमारी ॥
राणे रोस कियो थाँ ऊपर, साधाँ में मत जा री।
कुल को दाग लगै छै भाभी, निंदा हो रही भारी ॥
साधाँ रे सँग बन बन भटको, लाज गुमाई सारी।
बड़ा घरां थें जनम लियो छै, नाचो दे दे तारी ॥
वर पायो हिंदवाणे सूरज थें काईं मन धारी।
मीरा गिरधर साध संग तज, चलो हमारे लारी ॥
[मीराबाई]-मीरा बात नहीँ जग छानी, ऊदाबाई समझो सुघर सयानी ॥
साधू मात पिता कुल मेरे, सज्जन सनेही ज्ञानी।
संत चरन की सरन रैन दिन, सत्त कहत हूं बानी ॥

राणा ने समझावो जावो, मैं तो बात न मानी।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, संतों हाथ बिकानी॥

[ऊदाबाई]-भाभी बोलो वचन विचारी।
साधों की संगत दुख भारी, मानो बात हमारी॥
छापा तिलक गल हार उतारो, पहिरो हार हजारी।
रतन जड़ित पहिरो आभूषण, भोगो भोग अपारी।
मीरा जी थें चलो महल में, थांने सोगन म्हारी॥

[मीराबाई]-भाव भगत भूषण सजे, सील संतोष सिंगार।
ओढ़ी चूनर प्रेम की, गिरधर जी भरतार।
ऊदाबाई मन समझ, जावो अपने धाम।
राज पाट भोगो तुम्हीं, हमें न तासूं काम॥

(१५१)

तू मत बरजे माइड़ी, साधां दरसण जाती।
राम नाम हिरदे बसै, माहिले मन माती॥ टेक॥
माइ कहै सुन धीहड़ी, कहे गुण फूली
लोक सोवै सुख नींदड़ी, थूं क्यूं रैणज भूलो॥
गेली दुनियां बावली, ज्यां कूं राम न भावै।
ज्यां रे हिरदे हरि बसे, त्यां कूं नींद न आवे॥
चौबास्यां की बावड़ी, ज्यां कूं नीर न पीजे।
हरि नाले अमृत झरे ज्यां की आस करीजे॥
रूप सुरंगा राम जी, मुख निरखत जीजे।
मीरा व्याकुल बिरहणी, आपणो कर लीजे॥

(१५२)

यो तो रँग धत्ता लग्यो ए माय ॥ टेक ॥
पिया पियाला अमर रस का, चढ़ गई घूमघुमाय,
यो तो अमल म्हांरो कबहु न उतरे, कोट करो न उपाय।
सांप पिटारो राणाजी भेज्यो, द्यो मेड़तणी गल डार।
हँस हँस मीरा कँठ लगायो, ये तो म्हांरे नौसर हार॥
बिष को प्यालो राणाजी मेल्यो, द्यो मेड़तणी ने पाय।
कर चरणामृत पी गई रे, गुण गोविंद रा गाय॥
पिया पियाला नाम का रे, और न रँग सोहाय।
मीरा कहै प्रभु गिरधर नागर, काचो रँग उड़ जाय॥

(१५३)

अब नहिँ बिसरूँ, म्हांरे हिरदे लिख्यो हरि नाम।
म्हांरे सतगुर दियो बताय, अब नहिँ बिसरूँ रे॥ टेक॥
मीरा बैठी महल में रे, उठत बैठत राम।
सेवा करस्यां साध की, म्हांरे और न दूजो काम॥
राणोजी बतलाइया कइ देणो जवाब।
पण लागो हरि नाम सूँ, म्हांरे दिन दिन दूनो लाभ॥
सीप भस्यो पानी पिवे रे, टांक भस्यो अन्न खाय।
बतलायां बोली नहीँ रे, राणोजी गया रिसाय॥
विष रा प्याला राणोजी भेज्या, दीजो मेड़तणी के हाथ।
कर चरणामृत पी गई, म्हांरा सबल धणी का साथ।
विप को प्यालो पी गई, भजन करे उस ठौर।

थांरी मारी ना मरूँ, म्हांरी राखणहारो और ॥
राणोजी मो पर कोप्यो रे, मारूँ एकन सेल ।
मास्यां पराछित लागसी, मां ने दीजो पीहर मेल ॥
राणो मो पर कोप्यो रे, रती न राख्यो मोद ।
ले जाती वैकुंठ में. यो तो समझयो नहीं सिसोद ॥
छापा तिलक बनाइया, तजिया सब सिंगार ।
में तो सरने राम के, भल निन्द्यो संसार ॥
माला म्हांरे देवड़ी, सील बरत सिंगार ।
अबके किरपा कीजियो, हूँ तो फिर बांधूँ तलवार ॥
रथां बैल जुताय के ऊँटां कसियो भार ।
कैसे तोड़ूँ राम सूँ, म्हांरो भो भो रो भरतार ॥
राणो सांड्यो मोकल्यो, जाज्यो एके दौड़ ।
कुल को तारण अस्तरो, या तो सुरड़ चली राठोड़ ॥
सांड्यो पाछो फेस्यो रे, परत न देस्यां पांव ।
कर सूरा पण नीसरी, म्हांरे कुण राणे कुण राव ॥
संसारी निन्दा करे रे. दुखियो सब परिवार ।
कुल सारो ही लाजसी. मीरा थें जो भया जी ख्वार ॥
राती माती प्रेम की विष भगत को मोड़ ।
राम अमल माती रहे, धन मीरा राठोड़ ॥

(१५४)

सीसोद्या राणो प्यालो म्हांने क्यूँ रे पठायो ॥ टेक ॥
भली बुरी तो में नहिं कीन्हीं, राणा क्यूँ है रिसायो ।

थाँने म्हाँने देह दिवी है, ज्याँ रो हरि गुण गायो ॥
कनक कटोरे ले विष घोल्यो, दयाराम पंडो लायो ।
अठी उठी तो मैं देख्यो कर चरणामृत पायो ॥
आज काल की मैं नहिँ राणा, जद यह ब्रह्मँड छायो ।
मेढ़तियाँ घर जन्म लियो है, मीरा नाम कहायो ॥
प्रहलाद की प्रतिज्ञा राखी, खंभ फाड़ वेगो धायो ।
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर, जन को विड़द वढ़ायो ॥

(१५५)

राणा जी तैं जहर दियो मैं जाणी ॥ टेक ॥
जैसे कंचन दहत अगिन में, निकसत बारावाणी ॥
लोक लाज कुल काण जगत की, दइ वहाय जस पाणी ॥
अपने घर का परदा कर ले मैं अबला बौराणी ॥
तरकस तीर लग्यो मेरे हिय रे, गरक गयो सनकाणी ॥
सब संतन पर तन मन वारों, चरण कमल लपटाणी ।
मीरा को प्रभु राख लई है, दासी अपणी जाणी ॥

(१५६)

हेली म्हां सूँ हरि बिन रह्यो न जाय ॥ टेक ॥
सासु लड़े मेरी नणद खिजावे, राणा रह्या रिसाय ॥
पहरो भी राख्यो चौकी बिठाय्यो, ताला दियो जड़ाय ॥
पूर्व जन्म की प्रीत पुराणी, सो क्यूं छोड़ी जाय ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर और न आवे म्हांरी दाय ॥

(१५७)

रामं तने रँग राची, राणा मैं तो साँवलिया रँग राची रे ॥
ताल पखावज मिरदंग बाजा, साधाँ आगे नाची रे ॥
कोई कहे मीरा भई बावरी, कोई कहे मदमाती रे ॥
विष का प्याला राणा भर भेज्या, अमृत कर आरोगी रे ॥
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर, जनम जनम की दासी रे ॥

(१५८)

मेरो मन हरि सूँ जोरयो, हरि सूं जोर सकल सूँ तोरयो ॥
मेरो प्रीत निरंतर हरि सूँ, ज्यूँ खेलत बाजीगर गोरयो ।
जब मैं चली साध के दरसण तब राणो मारण कूँ दौरयो ॥
जहर देन की घात विचारी, निरमल जल में ले विष घोरयो ।
जब चरणोदक सुण्यो सरवणा, राम भरोसे मुख में ढोरयो ॥
नाचन लगी जब घूँघट कैसो, लोक लाज तिण का ज्यूँ तोरयो ।
नेकी बदी हूँ सिर पर धारी, मन हस्ती अंकुस दे मोरयो ॥
प्रगट निसान बजाय चली मैं, राणा राव सकल जग जोरयो ।
मीरा सबल धणी के सरणे, कहा भयो भूपति मुख मोरयो ॥

(१५९)

राग पटमंजरी

मीरा लागो रंग हरी, औरन सब रँग अटक परी ॥ टेक ॥
चूड़ो म्हांरे तिलक अरु माला, सील बरत सिंगारो ।
और सिंगार म्हांरे दाय न आवे, ये गुरु ज्ञान हमारो ॥
कोइ निन्दो कोइ बिन्दो मैं तो, गुन गोविँद का गास्यां ।

जिन मारग म्हांरा साध पधारे, उन मारग मैं जास्यां ॥
चोरि न करस्यां जिव न सतास्यां, कांई करसी म्हांरो कोय ।
गज से उतर के खर नहिं चढ़स्यां, ये तो वात न होय ॥
सती न होस्यां गिरधर गास्यां, म्हांरा मन मोहो घणनामी ।
जेठ वहू को नातो न राणजी, हूँ सेवक थें स्वामी ॥
गिरधर कंथ गिरधर धनि म्हांरे मात पिता वोइ भाई ।
थें थांरे में म्हांरे राणा जी, यूँ कहे मीरा वाई ॥

(१६०)

मेरो मन लागो हरि जी सूँ, अव न रहूँगी अटकी ॥ टेक ॥
गुरु मिलिया रैदास जी, दीन्ही ज्ञान की गुटकी ।
चोट लगी निज नाम हरी को, म्हांरे हिवड़े खटकी ॥
माणिक मोती परत न पहिरूँ, मैं कच की नटकी ।
गेणो तो म्हांरे माला दोवड़ी, और चंदन की कुटकी ॥
राज कुल की लाज गमाई, साधां के सँग मैं भटकी ।
नित उठ हरिजी के मंदिर जास्यां, नाच्यां देदे चुटकी ॥
भाग खुल्यो म्हांरो साध संगत सूँ, सांवरिया की वटकी ।
जेठ वहू की काण न मानूँ, घूँघट पड़ गइ पटकी ॥
परम गुरां के सरन में रहस्यां, परणाम करां लुटकी ।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, जनम मरन सूँ छुटकी ॥

(१६१)

अव मीरा मान लीज्यो म्हांरी, हांजी थांने सहियां वरजे सारी ।
राजा वरजैं राणी वरजैं, वरजैं सव परिवारी ।

कुंवर पाटवी सो भी वरजै, और सेहल्या सारी ॥
सीस फूल सिर ऊपर सोवे बिंदलो सोभा भारी।
गले गुजारी कर में कंकड़, नेवर पहिरे भारी ॥
साधुन के ढिग बैठ के, लाज गमाई सारी।
नित प्रति उठि नीच घर जाओ, कुल कू लगाओ गारी ॥
बड़ा घरां का छोरु कहावो नाचो दे दे तारी।
वर पायो हिंदुवाणी सूरज, अब दिल में कहा धारी ॥
तारयो पीहर सासरो तारयो, माय मोसाली तारी।
मीरा ने सतगुरु जी मिलिया, चरण कमल बलिहारी ॥

(१६२)

मेरा कोइ नहिं रोकन हार, मगन होय मीरा चली ॥ टेक ॥
लाज सरम कुल की मरजादा, सिर से दूर करी।
मान अपमान दोऊ धर पटके, निकली हुँ ज्ञान गली ॥
ऊँचो अटरिया लाल किवड़िया, निरगुन सेज बिछी।
पचरंगी झालर सुभ सोहै, फूलन फूल कली ॥
बाजूबंद कडूला सोहै, माँग संदूर भरी।
सुमिरन थाल हाथ में लीन्हा, सोभा अधिक भली ॥
सेज सुखमणा मीरा सोवे, सुभ है आज घरी।
तुम जाओ राणा घर अपणे, मेरी तेरी नाहिं सरी ॥

(१६३)

राग कामोद

बरज मैं काहू की नाहिं रहूँ ॥ टेक ॥

(१२३)

सुनो री सखी तुम चेतन होइ के, मन की वात कहूँ ॥
साध संगति करि हरि सुख लेऊँ, जग सूँ मैं दूरि रहूँ ॥
तन धन मेरो सवही जावो, भल मेरो सीस लहूँ ॥
मन मेरो लागो सुमिरन सेती, सब को मैं वोल सहूँ ॥
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर, सतगुरु सरन रहूँ ॥

(१६४)

राणा जी हूँ अब न रहूँगी तोरी हटकी ।
साध संग मोहि प्यारा लागै, लाज गई घूँघट की ॥
पीहर मेढ़ता छोड़ा अपना, सुरत निरत दोउ चटकी ।
सतगुरु मुकर दिखाया घट का, नाचुंगी देदे चुटकी ॥
हार सिंगार सभी ल्यो अपना, चूड़ी कर की पटकी ।
मेरा सुहाग अव मोकूँ दरसा, और न जाने घट की ॥
महल किला राना मोहिं न चहिये, सारी रेसम पट की ।
हुई दिवानी मीरा डोलै, केस लटा सब छिटकी ॥

(१६५)

अव नहिं मानूँ राणा थाँरी, मैं वर पायो गिरधारी ॥ टेक ॥
मनि कपूर की एक गति है, कोऊ कहो हजारी ।
कंकर कंचन एक गति है, गुंज मिरच इकलारी ॥
अनड़ धणी को सरणो लीनो, हाथ सुमिरनी धारी ।
जोग लियो जब क्या दिलगीरी, गुरु पाया निज भारी ॥
साधू संगत महँ दिल राजी, भई कटुंब सूँ न्यारी ।
क्रोड़ वार समझाओ मोकूँ, चालूँगी बुद्ध हमारी ॥

रतन जड़ित की टोपी सिर पै, हार कंठ की भारी।
चरण घूँघरू घमस पड़त है. म्हैं करां स्याम सूँ यारी॥
लाज सरम सब ही मैं डारी, यौं तन चरण अधारी।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, भक्त मारो संसारी॥

(१६६)

राणाजी मैं गिरधर रे घर जाऊँ।
गिरधर म्हांरो साचो प्रीतम, देखत रूप लुभाऊँ॥
रैन पड़े तब ही उठ जाऊँ, भोर भये उठ आऊँ।
रैन दिना वा के सँग खेलूँ, ज्यों रीझै ज्यों रिझाऊँ॥
जो वस्त्र पहिरावे सोई पहिरूं, जो दे सोई खाऊँ।
मेरे उनके प्रीत पुरानी, उन बिन पल न रहाऊँ॥
जहँ बैठावे जित ही बैठूँ, बेचे तौ बिक जाऊँ।
जन मीरा गिरधर के ऊपर, वारबार बल जाऊँ॥

(१६७)

राणा जी मैं सांवरे रँग राची॥ टेक॥
साज सिंगार बांध पग घुँघरू, लोक लाज तज नाची॥
गई कुमिति लइ साध की संगत, भगत रूप भई सांची॥
गाय गाय हरि के गुन निस दिन, काल व्याल सों बाची॥
उन बिन सब जग खारो लागत, और बात सब काची॥
मीरा श्री गिरधरन लाल सों, भगति रसीली याची॥

(१६८)

राणा जी मैं तो गोविंद का गुण गास्यां॥ टेक॥
चरणामृत का नेम हमारे, नित उठ दरसण जास्यां॥

हरि मन्दिर में निरत करास्यॉं, घूँघरिया धमकास्यॉं ॥
राम नाम का जहाज चलास्यॉं, भवसागर तर जास्यॉं ॥
यह संसार बाड़ का कॉंटा, ज्यॉं संगत नहिं जास्यॉं ॥
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर, निरख हरख गुण गास्यॉं ॥

(१६९)

राणा जी मुझे यह बदनामी लगे मीठी ॥ टेक ॥
कोई निंदो कोई विंदो मैं चलूँगी चाल अपूठी ॥
सांकली गली में सतगुर मिलिया, क्यूँ कर फिरूँ अपूठी ॥
सतगुरु जी सूँ बातज करतां, दुरजन लोगां ने दीठी ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, दुरजन जलो जा अँगीठी ॥

(१७०)

मीरा मगन भई हरि के गुण गाय ॥ टेक ॥
सांप पिटारा राणा भेज्या, मीरा हाथ दियो जाय ।
न्हाय धोय जब देखण लागी, सलिगराम गई पाय ॥
जहर का प्याला राणा भेज्या, अमृत दीन्ह बनाय ।
न्हाय धोय जब पीवण लागी, हो अमर अंचाय ॥
सूल सेज राणा ने भेजी, दीज्यो मीरा सुलाय ।
सांझ भई मीरा सोवण लागी, मानो फूल बिछाय ॥
मीरा के प्रभु सदा सहाई, राखे विघन हटाय ।
भजन भाव में मस्त डोलती, गिरधर पै बलि जाय ॥

(१७१)

राग पील्

राणा जी म्हांरी प्रीत पुरबली मैं क्या करूं ॥ टेक ॥

राम नाम बिन घड़ी न सुनावे, राम मिले म्हांरा हियरा ठराय।
भोजनियां नहिं भावे म्हांने, नींदड़ली नहिं आय ॥
बिष का प्याला भेजिया जी, जावो मीरा पास।
कर चरणामृत पी गई, म्हांरे रामजी के बिस्वास ॥
विष का प्याला पी गई जी, भजन करे राठोर।
थांरी मारी न मरूँ, म्हांरो राखणहारो ओर ॥
छापा तिलक बनाविया जी, मन में निस्चय धार।
रामजी काज सँवारिया जी, म्हांने भावें गरदन मार ॥
पेर्यां बासक भेजिया जी, ये है चन्दनहार।
नाग गले में पहिरिया म्हांरो, महलां भयो उजार ॥
राठाड़ां की धीयड़ी जी सीसोद्यां के साथ।
ले जाती वैकुंठ को, म्हांरी नेक न मानी बात ॥
मीरा दासी राम की जी, राम गरीब-निवाज।
जन मीरा की राखजो, कोइ बांह गहे की लाज ॥

(१७२)

राग अगना

राणा जी थें क्याने राखो मसूं वेर ॥ टेक ॥

राणाजी म्हांने असा लगत है, ज्यूँ विरछन में केर ॥
मारू घर मेवाड़ मेरतो, त्याग दियो थाँरो सहर ॥

थांरे म्हयां राणा कुछ नाहिं बिगड़े, अब हरि कीन्हीं मेहर ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, हठ कर पी गइ जहर ॥

(१७३)

राणा जी थांरो देसड़लो रंग रूड़ो ॥ टेक ॥
थांरे मुलक में भक्ति नहीं छे, लोग बसें सब कूड़ो ॥
पाट पटंबर सब ही मैं त्यागा, सिर बांधूं ली जूड़ो ॥
माणिक मोती सबही मैं त्यागा, तज दियो कर को चूड़ो ।
मेवा मिसरी मैं सबही त्यागा, त्याग्या छे सक्कर बूरो ॥
तन की मैं आस कबहुं नहिं कीनी, ज्यूं रण माहीं सूरो ॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, वर पायो मैं पूरो ॥

(१७४)

राग खम्माच

न भावे थारो देसड़लो जी, रूड़ो रूड़ो ॥ टेक ॥
हरि की भगति करे नहिं कोई, लोग बसें सब कूड़ो ॥
मांग और पाटी उतार धरूंगी, ना पहिरूं कर चूड़ो ॥
मीरा हठीली कहे संतन से, वर पायो छे पूरो ॥

(१७५)

म्हांरे सिरपर सालिगरास, राणाजी म्हारो काई करसी ॥
मीरा सूं राणा ने कही रे, सुण मीरा मोरी बात ।
साधों की संगत छोड़ दे रे, सखियां सब सकुचात ॥
मीरा ने सुन यों कही रे, सुन राणा जी बात ।
साध तो भाई बाप हमारे, सखियां क्यूं घबरात ॥

जहर का प्याला भेजिया रे, दीजो मीरा हाथ।
अमृत करके पी गई रे, भली करैं दीनानाथ॥
मीरा प्याला पी लिया रे, बोली दोउ कर जोर।
तैं तो मारण की करी रे, मेरो राखणहारो ओर॥
आधे जोहड़ कीच है रे, आधे जोहड़ हौज।
आधे मीरा एकली रे, आधे राणा की फौज॥
काम क्रोध को डाल के रे, सील लिये हथियार।
जीती मीरा एकली रे, हारी राणा की धार॥
काचगिरी का चौतरा रे, बैठे साध पचास।
जिन में मीरा ऐसी दमके, लख तारों में परकास॥
टाँडा जब वे लादिया रे, बेगी दीन्हा जाण।
कुल की तारण अस्तरी रे, चली है पुष्कर न्हाण॥

(१७६)

राग पीलू

पग घूँघरू बाँध मीरा नाची रे॥ टेक॥
मैं तो मेरे नारायण की, आपहि हो गई दासी रे।
लोग कहैं मीरा भई बावरी, न्यात कहैं कुलनासी रे।
विष का प्याला राणाजी भेज्या, पीवत मीरा हाँसी रे।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर सहज मिले अविनासी रे।

समाप्त

१—त्रिविध ज्वाला=तीनों प्रकारके दुख, अर्थात अध्यात्मिक (शारीरिक और मानसिक), आधिदैविक आधी अतिवृष्टि आदि दैव-प्रकोपसे पहुंचाने वाले) तथा आधिभौतिक दुख। गोतम धरण=गौतमकी गृहिणी अहिल्या। अगम तारण तरण=अगम्य संसार सागरसे पार कराने वाले बेड़ेके समान।

२—अविनाशी=परमात्मा। जेताइ=जो कुछ भी। दीसे= दिखाई पड़ता है। धरनि=धरती। उठि जासी उठ जासी विनश्वर है। चहर को बाजी=संसार चिड़ियोंका खेल जैसा है, जो सांझ होते ही बसेरेको चल देती हैं। जुगति=युक्ति, ईश्वर-प्राप्ति का उपाय। आसी=आयगा। जमकी भौरी=मृत्यु का भय, आवा-गमनका भय।

५— कान=मर्यादा।

६—थाने=तुमको। राती=लाल। कुलरा नाती=कुलका नाता। दस्त=हाथ। राती=रत हुआ।

७—खांड=तलवार। फंसी=फांसी।

८—खत=ऋणका लेखा, कर्मोंका लेखा। नटे=इनकार करना।

१०—महुओ=मन। वहाय दीजे=दूर कर दीजिये।

१२—यो=इस। थांरी=तुम्हारी।

१३ सरब सुधारण काज=सर्भ कार्य सुधारने के हेतु।

अपरवल=अपार। निरधारी=निराधारोंके, असहायों के। पेज=ताज।

१४—होजी=अजी। म्हाराज=महाराज, प्रभु, स्वामी। रावली=आपकी। हिवड़ा=हृदय। साज=भूषण।

१५—ज्यूं जानो ज्यूं=जैसे हो वैसे, किसी भी प्रकार। औगणहारी=अवगुणोंसे भरी।

१६—नैणा=नयनों। म्हांने=हमको।

१७—बालद=बैल। छान छवंद=छप्पर छा दिया। बुकंद=खाया। खीच=खिचड़ी। अरोग्यो=ग्रहण करली। परसण=प्रसन्न। पावंद=पाया, खाया। रहंद=रहता है।

१८—इसकी तुलना सूरदास के निम्न पद से करिये—

बसे मेरे नयननि नंदलाल।

सांवरी सूरति माधुरी मूरति राजिव नयन विसाल।

मोर मुकुट मकराकृति कुंडल, अरुण तिलक दिये भाल।

शंख चक्र गद पद्म विराजत, कौस्तुभ मणिवनमाल।

बाजूबंद जरहके भूषण, नूपुर शब्द रसाल।

दास गोपाल मदन मोहन पिय, भक्तन के प्रतिपाल।

१९—जन=भक्त। भीर=संकट। नरहरि=नृसिंह।

२१—सदान=सदना।

२३—बेड़ा=जीवननैया। संसा=संशय। सोग=शोक। निवार=दूर कर। लख चौरासी धार=चौरासी लाख योनियोंमें।

२४—बारे=बाल्यावस्था।

२५—बोर=बेर। भीलणी=शबरी। अचारवती=आचार-विचारसे रहनेवाले। कुचीलणी=मैले-कुचैले वस्त्रवाली। रसकी रसीलणी=प्रेम रस का आनंद लेनेवाली थी। हेत=सम्बन्ध। भूलणी=आनन्द करती थी। गोकुल अहीरणी=गोकुलकी गोपिका।

२६—संतवादी = सत्यवादी। हाड़ = हड्डियाँ। गरे = गले। विषसे अमृत करे = बुराईको भलाईमें परिणत कर देते हैं। सूरदास का भी इसी आशय का दोहा है—भावी काहू सौं न टरै।

२७—जीवणा = जीवनकाल। कुण = कोई। जंजार = जंजाल, प्रपंच। कह = क्या। लार = साथ।

२८ मनकी मैल = मनोविकार। घट में = शरीरमें। बिलार विषया = विषय-रूपी बिलार। अभिमान...ठहरात = मिथ्याभि-मानमें फूले रहनेकी वजहसे उपदेशादिका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। मनिया = मालाके दाने।

२९—लोकड़ियाँ = संसारी लोग। पावलिया = पैर। फिरि आवे सारो गाम रे = यों सारे गांव फिर आते हैं। थाय = हाँ। त्याँ = वहाँ। मुकिने = छोड़कर। बेसी = बैठे। चारे = चारो।

३०—रावलो = आपका। बिड़द = विरद। रुड़ो = उत्तम। पीड़ित पराये प्राण=पराये अर्थात् भक्तों के प्राणों की रक्षा करनेके लिये दुःखी होनेवाले। आन=अन्य।

३१—कमल-दल लोचना=कमलदलों के समान लोचनवाले श्रीकृष्ण। पियाल=पाताल।

३२—मनो=मानो। मकर=मगर। कुंडलकी...मिलन आई=

मकराकृत कुंडलोंकी प्रभा कपोलोंपर फैली हुई है और उन (कुंडल) के ऊपर पड़े हुए अलकोंके प्रतिबिम्ब उस (प्रभा) के अन्तर्गत ऐसे जान पड़ते हैं मानों मीनोंका झुंड अपने सरोवरोंको त्याग कर सागरोंसे मिलनेके लिये आ पहुंचा हो। टौना=टोना। खंजन अरु मधुप मृगछौना=जिसके सामने खंजन, भ्रमर, मीन और मृगशावक सभी हार मान जाते हैं। सुग्रीव=सुन्दर गला। दाड़िम द्युति=अनारकी भांति। क्षुद्र घंट किंकिनी=घुंघरूदार करधनी।

३३—बसि गो=रम गया। सों=संग। कालिंदी=यमुना। दुवरवां=द्वारपर।

३५--बौराय=पागलपन।

३८ करणां=करुण प्रार्थना। भेरी पहुंचानेवाले। रूम-रूम=रोम-रोम। साता=शांति। फेरा फेरी=आवागमन।

३९ दोर=दौड़, पहुंच। कबर=कब रे। सी=समान। अकोर=अंकोर, भेंट।

४०—जीओ=भोग लगाओ। आरोगो=स्वीकार करो।

४३ - हिये=हृदय। गूंज=भेदकी बात। चूवा=लाल। रमवा=खेलने। गल बांटी=गलबांही।

४४ - गुरु=गुप्त। गांसी=बाण। मधुमासी=मधुमक्खी।

४५ - कछू=कुछ भी।

४६ - माई=सखी। छानी=छिपकर।

४७—लुभाणी=लुभाई हुई हूं। जैसे पाहुण पाणी हो=जिस

प्रकार पानी पर पत्थर। कुमाणी=कमाये, संचित किये। अवध= अवधि, आवागमनका काल। जूण=योनि। ऊधरे=उद्धार पाया।

४८ वसियो=वस गया है। रसियो=रसिक। वाड़= वड़ा। सजूं=मिलनेकी तैयारी करूं। डाको=डंका। कड़्यां= कड़ियाँ, जिनसे ढोरकी डोरी खींची जाती है। मोरचंग=मुहचंग, लोहेका वना मुंहसे वजानेका वाजा, जिससे ताल दिया जाता है।

५०—ताली लागी=लगन लग गई। मन री=मनकी। उणारथ=लालसा। छीलरिये=छिछला तालाव। डावरिये= वरसाती पानीसे भरे छोटे गड्ढे। कुण=कौन। दरियाव= समुद्र। हाल्यां मोल्यां=हाली मुहाली, नौकर-चाकर। कामदारां= कारपरदाज अफसर प्रवन्धक। जाव=जवाव। कामदारां सूं काम···दरवार=मुझे राज्याधिकारियोंसे प्रयोजन नहीं, मैं सीधे राजासे वात करूंगी। काच=शीशा। कथीर=रांगा। हीरां री वोपार=हीरेका व्यापार। सीर=सम्बन्ध। परच्यो=परिचय दिया। छै=है।

५१—वांरो=उसका, अपना। वुराल्यां=वजाना।

५२—हौं=मैं। पाम=पांव।

५३—म्हांरा=मेरा, अपना। रमैया=प्रियतम। तेरो ही उमरण तेरो ही सुमरण=तेरा ही स्मरण और चिन्तन किया करती हूँ। जहां-जहां पांव धिरत करूँ री= धरते समय प्रत्येक पग को हरिकीर्तनमें किये गये पदाक्षेपके समान करूँगी।

—५४— ओलुंड़ी=याद ।

५५ - दिधला=दिया । मनसा=मन । पटियाँ=पाटी ।

५६—उदक=जल । दादुर=मेंढ़क । पीनवत=मोटा । न संचरैं=फायदा न करे ।

५७ —मी: । बोला=मधुरभाषी । तमोला=ताम्बूल । कर धर रही कपोला=कपोलपर हाथ रखे चिंतित खड़ी हूँ ।

५८—पलका=पलंग ।

५९—वैस=आयु । कौल=प्रतिज्ञा । कद=कब । सनेस=स्नेह ।

६१— जीजे=जीवित रहूँ ।

६२—लँगर=नटखट ।

६३ - कुसुमल=कुसुंभी रंगकी, लाल । दरयाई=रेशमी पतली साटन । लंगो=लहंगा । ऊभी=खड़ी ।

६४ — काठ=कठिन । मन काठ कियो=मन कठोर बना लिया । कैसे करि=किस प्रकार ।

६५—पासी=फाँसी ।

६७ - ऊभी=खड़ी । ने=और । याथरी=चहर । पछेड़ी=पिछवई । दहीँड़ी=एक मिठाईका नाम । एलची=इलायची । रमवा=रमण करने । तम ने...आँखड़ी=तुमको देखकर मेरी आँखें ठंडी हुईं ।

६८—साजन=रक्षक । कड़ी=कड़वी । डिगी=डगमगाती हुई । घड़ी=पसेरी ।

६६—पाट=परदा, घूँघट। साँभ लग परभात=सन्ध्या से लेकर प्रभात तक का समय आ गया। अबोलना=अनबोला। काहे की=कैसी। कुसलात=कुशल। उघड़ि=उभड़।

७०—थेँ=तू। छो=हो (सम्बोधन)।

७१—मिलण रो=मिलने का। घणो उमावो=बड़ी उमंग। बाटड़ियाँ=बाट, मार्ग। पासड़ियाँ=पास। आँटड़ियाँ=टेढ़ापन। आसड़ियाँ=आशामें।

७३—नातो=नाता। पानाँ=पान। पिंड रोग=पाँडु रोग। छाने=छिपकर। लाँघन=उपवास। बाव्ल=बावाने। करक=हड्डी। आहि=आकर। साम्हले=सुन लेगी। खिण=क्षण।

७४—आरति=चाह। पाटी पारोँ···संवारोँ हो=ज्ञान द्वारा तत्वबोध प्राप्त करने और शुद्ध बुद्धि द्वारा अपना मार्ग निश्चित करूँ।

७५—आवड़े=सुहाती है। धान=अन्न। झूरताँ=शोकावेगमें।

७६—नसानी=नष्ट हो गई। विहसी=व्यतीत हो गई। वेदन=वेदना।

७७—ढुलावे=इधर उधर डुलाती है, बेचैन किये रहती है। दाय=पसंद। अलूनी=फीकी। ऊलर होइ आई=चढ़ आई। कूण=कौन। बुतावे=बुझावे, शांत करे। बतलाने=बातें करे।

७८—परभात=सवेरा। चमक=चौंक।

७६—पपइया=पपीहा। चितारो चेतारो=चेत किया, याद किया। छी=थी। दाव्या=जले हुए। लूण=लवण, नमक।

हिवड़े=हृदय। सारो=चलाया। हिवड़े करवत सारो=हृदय पर आरा चला दिया। उठि बैठो=जा बैठा। बोल बोल कंठ सारो=पीपीकी रट लगाकर अपना गला फाड़ डाला।

८० — पावेली = पावेगी। राळेली = डालेगी। चांच = चोंच। मेला = मिलन। धान = धान्य, अन्न।

८१ — निरमोहड़ा = निर्मोही। छी = थी। अंवली = अन्य ही, दूसरी।

८३ — जासी = चला गया। खातर = खातिर, वास्ते। करवत = लूँगी कासी = काशीमें करवत अर्थात् आरेसे गला कटा लूँगी।

८४ — ज्यूँ जाने त्यूँ = जैसे बन पड़े वैसे। रावरी = आपकी।

८५ — बहुरि = लौटकर।

८७ — अँन = घर, हृदय। वह गइ करवत अँन = हृदयपर आरी चल गई।

८८ — धान = स्वभाव। जीवन मूल जड़ी = वे जीवनकी औषधिके समान हैं, अर्थात् जीवनके आधार हैं।

८९ — आज्यो = आ जाओ। हूँ = मैं। जन = दासी। अवध = अवधि। वदीती = बीत गई। दुतियन = दूसरों। दोरे = कठिन हो गया।

९१ — वारी-वारी = बलिहारी जाती हूँ। आज्यो=आ जाओ। तकसीर = अपराध।

९२ — यार = प्रियतम। बार = बाल।

९३ — खारा = फीका, नीरस। थाँरा = तुम्हारा।

९४ - बिरह बिथा=विरहाग्नि। छोड़्याँ नहिं बनै=त्याग देनेसे काम नहीं चलेगा।

९५---आस्याँ=होयेगी। सामा=शाम। सरैँ=पूर्ण होते हैं।

९६—अगुना = निर्गुण।

९७ - याकुल व्याकुल = अत्यन्त व्याकुल। बैणा = वचन।

९८—सुण = सुन।

१००—नी = की। हेम नी = सोनेकी। काँचे ते ताँत = कच्चे तागेसे अर्थात् प्रेमकी डोरीसे। जेम = जैसे, जिस ओर। तेमनी = वैसे ही। जेम खीचे तेमनी रे = जिस ओर खींचता है, उसी ओर खिंचती हूँ। सुम = मनोहर। एमनी = ऐसी ही।

१०१—सारो = बस। ललिता = सखी। पतियारो = विश्वास करो। मोरचंद = मोरका पंख।

१०२ कसुम्बी = कुसुमके रंगकी, लाल।

१०३—ने = को। सनेसो = संदेशा। गुझ वाती = गुप्त वात। जान बूझ गुझ वाती = जान बूझकर मौन धारण कर रखा है।

१०४—पेसखाना = पेशखेमा।

१०५ - साथी = मित्र, श्रीकृष्ण। नैन नीरज = कमलनैन। अंव = पानी। पाना=पान। झोलै = झोका। मनै = मुझको। सांकड़ारो = संकटमें।

१०६- घर्राई— धड़क रहा है। झर्राई = झर-झर आंसू बह रहे हैं।

१०७ - रसलोना = सलोना।

१०८—आरांह और = कुछका कुछ, अंडवंड।

१०६—अक्रूर = कंसका दूत जो कृष्णका चचा लगता था और उन्हें रथपर चढ़ाकर वृन्दावनसे मथुरा गया था।

११०—जलकी धुरी = जलके घूमनेसे भंवर पड़ जाती है। मदकी हस्ती = मस्त हाथी।

१११—मोसूं = मुझसे। ऐंडो = ऐंठता हुआ। डोले हो = चलता है।

११२—मना=मन। राग छतीसूं=छः राग व तीस (रागनियां)।

११४—खारी=फीकी। कारी=स्याह पड़ गई हूं। इकतारी= इकतारा। कंथ=कंत। जर=ज्वर। मेहर=कृपा।

११५—जोय=जलाकर। विरियां=अवसर।

११६—गैली=पगली। म्हेली=डार रखा है। पहिली= पहले, आरम्भमें। तालावेली=वेकली। दुहेली=दुखी।

११७ –तलक=तिलक। तमोली=ताम्बूल। दोरी=दु:खी।

११८--मधुरिया=सुहावना। झड़ लायो=वरस रहा है। फूंके=फुफकार मारता है।

११६—झरी=आंखोंसे आंसू झरने लगे। एक धरी=एक धार होकर। भोम=भूमि। वार=वाहर।

१२०—ज्यो -जो।

१२१—दांवन चीर=चीरका दामन। सावणियो=सावनकी

मेघमाला। झूम रह्यो=छा रही है। दोने=देओ। वलवीर= बलदेवके भाई, श्रीकृष्ण।

१२२—जोऊँ=देखती हूँ।

१२४—बिलमाई=लुभाकर रोक रखा। सवाई=विशेष रूपसे। पुरवाई=पुरवा।

१२५- पुरवलो=पूर्व जन्मका।

१२६—सरसाई=बहार।

१२७—गणगोर=चैत्र शुक्ला तृतीयाको होनेवाला गौरी व्रतका त्योहार। छे=है। जोर=शक्ति, दृढ़ विश्वास।

१२८—हंस=आत्मा। छिमता=क्षमता अथवा क्षमा। काँकण=कंगन। मुन्दरो=मुन्दरी, अंगूठी। दुलड़ी=दो लड़ोंकी माला। दोवड़ो=गहना। मेख=चोंच, जो दाँतोंमें सोनेका मढ़ाया जाता है। अखोटा=गहना। भूठणो=स्नान। वेसर= नाकका गहना, यह नथसे छोटा होता है और इसमें मोती और रत्न जड़े रहते हैं। जीहर=गहना। निरत=अनुरक्ति। घूँघरो= घूँघरदार गहना। गज=गजमुक्ताकी माला। राखड़ी=चूड़ामणि। आखड़ी=उदासीन।

परमात्माकी प्राप्ति के लिये जिन गुणोंकी आवश्यकता है, मीरांबाईने षोड़श शृंगारके रूपक द्वारा उन्हें व्यक्त किया है। परन्तु इस पदमें उल्लिखित षोड़श शृंगार इस प्रकारके शृंगारकी साधारण परिभाषासे मेल नहीं खाते। हिंदी शब्दसागरके अनुसार षोड़श शृंगार निम्न प्रकार होते हैं :—

अगस उवटन लगाना, स्नान करना, स्वच्छ वस्त्र पहनना, केश संवारना काजल लगाना, मांगमें सिंदूर भरना, पैरोंमें महावर देना, माथेपर तिलक देना, ठोढ़ीपर तिल वनाना, मेंहदी लगाना, सुवासित वस्तुओं इत्र आदिका प्रयोग करना, आभूषण पहनना, फूलमाला पहनना, पान खाना, मिस्सी लगाना, होटोंको लाल वनाना।

१२६ – वानां=वाण। विरह लगायके=विरहमें भिगोकर। पावन पंगा=पांवोसे पंगुकर दिया। रूम रूम=रोम रोम। जस्या=जैसा।

१३० नो=का। साकट=भक्तिहीन। थासे=हो जायगा।

१३१ मनखा=मनुष्य। वहुर न आती=वार-वार नहीं हुआ करता। मोसर=अवसर। सुँज=सूझ गई। पिछाणी= पहचान, भेदकी वात। नातर=नहीं तो। औरां सूँ=औरोंसे।

१३२ – मनमानी=मनमें वैठ गई। सुरत=स्मृति। असमानी= ईश्वरीय। विहानी=वीत गई। पिछानी=पहचाननेवाला। खानी=खानि, उत्पत्ति स्थान, योनि। सहदानी=निशानी।

१३३ मोटी=पूरी। नीरांत=भरोसा। थई=हुआ। सामलो= श्यामसुन्दर। सांचु-पधारा। घड़ाऊँ=गढ़वाऊँ। वीठल वर= विट्ठल रूपी वर। चुड़लो=चूरा। सिद सोनी=सिद्ध सुनार। झांझरिया=झांझन। गलां=गला। टीकम=त्रिविक्रम। कुँची= कुँजी। घैणा=गहना। हवे=अव। कांचू=चोली।

१३४ गली=मार्ग। झीना=पतला। सुरत झकोला खाय=

स्मृति परमात्माकी पूर्ण अनुभूतिमें असमर्थ हो जाती है। पैंड-पैंड=पग-पग। जुगन जुगन=युग-युगसे। कबीरने भी इसी प्रकार साधनाका मार्ग अत्यन्त सूक्ष्म बताया है। तुलना कीजिये –

जन कबीरकी शिषर घर बाट सलैली सैल।
पाव न टिकै पपीलका लोगनि लादे बैल॥

१३५—वाल्हा=वल्लभ, प्रियतम। जीं जीं=जिन-जिन। घट=शरीर। कींगरी=छोटी सारंगी, जिसे बजाकर कुछ जोगी भीख माँगते हैं। जायसीने भी इसका प्रयोग किया है—तजा राम राजा भा योगी, औ किंगिरी कर गहे वियोगी। कबीरने किंगिरी के स्थानपर रबाबका रूपक बाँधा है सब रँग तँत रबाब तन विरह बजावै नित्त। और न कोई सुणि सकै कै साई कै चित्त।

१३६—राजी=आनन्दित। दीदार दिखाया=दर्शन दिया।

१३७—बनज = बनजारा। नैनन बनज···साहिब पाऊँ = जो मुझे प्रियतम मिल जाँय तो अपनी आँखोंको जो बनजारेकी तरह इधर-उधर भटका करती हैं, एक जगह ठहरा लूँ। त्रिकुटी... झरोखा=योगी लोग भृकुटीके मध्यमें नासिकके ऊपर ध्यान लगाते है, और ब्रह्मरँध्रमें ध्यान लगाते हैं, जहाँ आत्माके दर्शन होते हैं। १३८—पात = किनारे। सांपड़े = निबट कर, हाथ मुँह धोकर। सुरज स्वामी = सूर्य भगवान। बिरँगी = विचित्र। काई ँ = क्या। असल गँवार – निपट मूर्ख। बारने = द्वारपर।

१३९—पैंड़ो=मार्ग। गैल=रास्ता।

विशेष—कुछ लेखकोंका कहना है कि 'जोगी' शब्दसे मीराने रैदास अथवा अपने दीक्षागुरुका संकेत किया है। कुछ तो यहाँ तक कल्पना करते हैं कि किंवदन्तियोंमें बाल्यावस्थामें मीरांको जिस साधु द्वारा गिरिधरलालकी मूर्त्ति दिये जानेका उल्लेख है, उन्हींको मीरांने 'जोगी' कहकर सम्बोधन किया है। मेरी समझमें हमें इस प्रकारकी कल्पनायें करनेकी आवश्यकता नहीं 'योगी' से हम योगीश्वर श्रीकृष्णका अर्थ ले सकते हैं।

१४१—उदासी=उदासीन।

१४२—कुसी=खुशी।

१४३—प्रीतड़ी=प्रीति। दुखड़ा=दुख। जेज=देदी। चंपेली=चमेली।

१४४—ने=से। आदेश=संदेश। कंथा=योगियोंकी मेखला। खोड़=खोल, देह।

१४५—अतीत=निरपेक्ष। चीत=चित्त, सुध।

१४६—मिलता जाज्यो=मिलते जाइयेगा।

१४७—म्हांने=मुझको। परण=पाणिग्रहण कर गया। गैली=गई गुजरी, मूर्ख। सुधे=अमृतसे। जान=जन, वराती।

१४८—आण=अस, शपथ। गोरल=गागौर। ओरज=और लोग। गोरज्या=गनगौर। भेव=भेद। माइतणो मोसाल=ननिहाल। मेड़तिया-मेड़ताके निवासी, भाईवंद। थाँसू=तुझे। मारगी=वटमारी।

१४९—गाल=कलंक। ओलंवा=उलहना। वासो ओलंबा=

तुम्हारे घर आकर वसी, इसीसे उलहना मिला। जान=वरात। पावणा=पाहुन। कचोले=कटोरा। ऊभा छे=खड़ा है। वचन न लोप=वचनोंकी उपेक्षा मत करो। भाड़ी=सहायक। रमापति=ईश्वर। भीड़=संकट।

१५१—माइड़ी=माँ। माहिले=अन्तरमें। माती=मस्त। माहिले मन माती=मैं अपनेमें मगन हूँ। धीहड़ी=वेटी। गुण फूली=गर्वीली। रैणज=रात भर। भूलो=भूली रहती है। चौवास्याँ=चौमासा।

१५२—धत्ता=गाढ़ा, यहाँ गाढ़ प्रेमसे आशय है। घूम घुमाय=जोरका नशा। मेणतणी=मीराँ। नौसर हार=नौलड़ा हार।

१५३—वतलाइया=पूछा है। कइ देणो जवाव=जवाव कर देना, जवाव दे देना। पण=प्रण। सीप भर्‍यो=सितुही भर, थोड़ा सा। टाँक भर्‍यो=प्रायः चार माशा। वतलायाँ=पूछने पर। सेल=वरछी। पराछित लागसी=प्रायश्चित करना होगा। मेल=भेजना। सिसोद=सिसोदिया वंशी राणा। देवड़ी=भगवान की। भो भो रो=भव-भव कर। भरतार=स्वामी। साँड्यो=साँडिया। मोलल्यो=भेजे। अ[illegible]री=स्त्री। मुरड़ चली=लौट चली। राठोड़=राठौरके देश। परत न देस्याँ पाँव=कभी पैर न रखूंगी। नीसरी=निकली हूँ। ख्वार=खार, मीराँ।

१५४—थाँने म्हाँने···गायो=तुमको मुझको, दोनोंको ईश्वरने शरीर दिया है, जिससे हरिका गुण गाय। अठी-उठी=इधर-उधर। जद=जव। आज कालकी मैं · छायाँ=यह आत्मा अजर अमर

है, जबसे यह सृष्टि आरम्भ हुई, तबसे यह आत्मा भी है। वेगो = वेगसे। विड़द = विरद, यश।

१५५—बाराबाणी=बारह सूर्योंके समान प्रभावाली खरी। गरक=गर्क हो गई। सनकाणी=सनक।

१५६—दाय=पसन्द।

१५७—तने=के। आरोगी=पी लिया।

१५८—जोस्यो=जोड़ा लगाया। गोस्यो=मारवारमें नजरबंद को कहते हैं। ज्यूँ खेलत बाजीगर गोस्यो=जिस प्रकार बाजीगर अपने भेदको गुप्त रखता है उसी प्रकार मैं हरिको हृदयमें गुप्त रीतिसे प्रतिष्ठित किये हूँ। सरवणा=श्रवण, कान।

१५९—रंग हरी=हरीका प्रेम। औरन...परी=औरों (हरीके अतिरिक्त अन्य) का रंग लगनेमें अड़चन पड़ गई। दाय=पसंद। कांई=कोई। कंथ=स्वामी। थं थारेमें म्हारे=तुम अपने रास्ते, मैं अपने रास्ते।

१६०—अटकी=इधर-उधर फँसी हुई। गुठकी=घूँट। हिवड़े= हृदय। परत=कभी। नटकी=अस्वीकार कर दिया है। गेणों= गहना। दोवड़ी=दोहरा। चन्दनकी कुटकी=कंठी। बटकी=मार्ग लिया। काण=लाज। पटकी=त्याग दिया। लुटकी=लटक कर, झुक कर।

१६१—थांने=तुमको। सहियां=सखियां। कुँवर पाटवी= युवराज। सेटल्या=सहेलियां। सोवे=सोहे। गुजारी=गुलूबंद। छोरु=लड़की। माय मोसाली=नानाका घर।

१६३ – वरज=रोकने पर। भल=भलेही। लहूँ=ले लो। बोल=ताना।

१६५ – गुंज=घुंघची। करां=करी।

१६७ – याची = याचनाकी, माँगी।

१६८—बाड़=बाड़ा।

१६६—मीठीयअच्छी, भली। कोई निंदो कोई विंदो=चाहे कोई निन्दा करे या प्रशंसा। अपूठी=अनूठी। वातज=बातें। दीठी = देखा।

१७०—अंचाय = पी कर।

१७१—ठराय = शीतल होता है। राठोर = राठौड़ कुल की। पेयां = संदूक। वासक = साँप। धीयड़ी = वेटी।

१७२—क्याँने = क्यों। मसूं = मुझसे। वेर = वैर। असा = ऐसा। विरछन = वृक्ष। केर = करील का पेड़। मारु = मेरा। रूस्यां = रूसनेसे, कुपित होने से। हरि कीन्हीं मेहर = हरि ने मुझे अपनी प्रियतमा वना लिया।

१७३—देसड़लो = देशका। रूड़ो = बुरा। कूड़ो = निम्न कोटि के। जूड़ो = जटा।

१७४—थारो = आपका। देसड़लो = देश, राज्य (राणाके देशसे आशय है) रूड़ो-रूड़ो = बुरा-बुरा। कूड़ो = असज्जन। चूड़ो = हाथी दांतकी चूड़ियाँ।

१७५—जोहड़ = बड़ा तालाब या झील। धार = फौज। काचगिरी = बिल्लौर। अस्तरी = स्त्री।

१७६—नारायण = कृष्ण, प्रियतम। न्यात = नातेदार। हाँसी = हँसी।